पहचान

सम्पादक : माधव नागदा

पहचान

मूल्य : तीस रुपये, प्रथम संस्करण, 1986
प्रकाशक : सम्बोधन प्रकाशन, कांकरोली-313324 [राजस्थान]
मुद्रक : मंगल मुद्रण, चेटक सर्किल, उदयपुर-313001 [राजस्थान]
आवरण : जयानसिंह सिसोदिया

PAHCHAN Edited by : MADHAV NAGDA 30 Rs.

प्रकाश तातेड़
और वृद्धिचन्द राव 'विचित्र' के

क्रम

लघुकथा की क्षमता

लघुकथा विधा अब अनजानी-अनपहचानी नहीं रही है। इसने तमाम विरोधों एवं मठाधीशों द्वारा नाक-भौं सिकोड़ने के बावजूद अपने आपको प्रतिष्ठित कर लिया है। वस्तुतः किसी भी साहित्यिक विधा की पहचान झंडाबरदारों से नहीं होती, वह होती है पाठकों की अदालत में उसकी भूमिका से। और लघुकथा इस अदालत में बखूबी विजयी रही है।

लघुकथा उत्तरोत्तर लोकप्रिय होती जा रही है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि वह गैर साहित्यिक होती जा रही है। यह हिन्दी कथा का दुर्भाग्य है कि यहां लोकप्रियता का पर्याय गैर साहित्यिकता से लिया जाता है। साहित्यिक कृति वही नहीं होती जिसे पुस्तकालयों की बन्द अलमारियों में दीमकें चाट जाय। जो रचना अधिकतर प्रबुद्ध पाठक वर्ग द्वारा पढ़ी और सराही जाती है वह भी साहित्यिक हो सकती है।

सवाल यह है कि कोई रचना पाठक के चिन्तन को किस दिशा में ले जाती है। मात्र उत्तेजना, गुदगुदी, सनसनाहट या भौंडा हास्य देने वाली रचना बेशक साहित्यिक नहीं है। चाहे वह कितनी ही लम्बी क्यों न हो। इसके विपरीत कोई रचना छोटी है किन्तु पाठक को सोच की नयी जमीन देती है, सामाजिक अन्तर्विरोधों को उद्घाटित करती है, व्यवस्था के छद्म को बेनकाब कर पाठक के मन में बदलाव की कामना जगाती है, शोषित और पीड़ित जन की जबान का काम देती है, अथवा सामाजिक परिवर्तन में सहयोगी की भूमिका अदा करती है तो वह कलेवर में लघु होकर भी साहित्यिक सरोकारों का पुरजोर निर्वाह कर रही होती है।

क्या लघुकथा साहित्यिक सरोकारों से कटी हुई है?

डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ के अनुसार "लघुकथा का कलेवर छोटा होता है, लेकिन उसकी मार बहुत दूरगामी होती है। इसमें जीवन की किसी विसंगति पर प्रहार किया जाता है।........ ...... लघुकथा का शिल्प चांदनी रात में सुई में धागा पिरोने की तरह है और उसका प्रभाव सुई की चुभन से कहीं वेधक और तीखा होता है।"

पाठक को खामख्वाह शब्द जाल में उलझाये रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। न ही उसे लम्बे-चौड़े प्रकृति चित्रण या यथार्थ के हूबहू ब्यौरों में भटकाने की जरूरत है। जो बात कहनी है अगर उसे बिना किसी आडम्बर या मुलम्मे के सीधे-सादे और कम से कम शब्दों में असरदार ढंग से कही जा सकती है तो फिर उसके विस्तार में क्यों जाएं ? डॉ. नामवरसिंह ने भी सुरेश पाण्डेय के साथ अपनी बातचीत में इस बात को महसूस किया और असगर वजाहत का उद्धरण देते हुए लघुकथा की सटीकता एवं सार्थकता पर अपनी सहमति व्यक्त की है।

यह बात सच है कि लघुकथाओं की भीड़ में बहुत सारी केवल छपने के लिए लिखी जा रही हैं एवं कई दैनिकों एवं साप्ताहिकों द्वारा मेटर की पूर्ति के लिए छापी जा रही है। लेकिन केवल इन्ही आधारों पर हमें पूरी की पूरी विधा को खारिज करने का कोई हक नहीं है। उसके लिए जिम्मेदार लेखक स्वयं है या उन्हें छापने वाले सम्पादकगण। यह हाल तो लघुकथा का ही नहीं, हर एक विधा का है और कविता का तो सर्वाधिक। किसी विधा पर बहस ही करनी है तो उस विधा की सार्थक एवं सशक्त रचनाओं को चुनकर करनी चाहिये न कि कमजोर एवं गलीज।

प्रस्तुत संग्रह में से ही बहुत सी लघुकथाओं को उद्धृत किया जा सकता है। विस्तार में न जाकर मैं कुछ के ही नाम लूंगा। 'टमाटर' एवं 'आजादी की दुम' अपनी प्रतीकात्मकता एवं व्यंग की महीन किन्तु पैनी धार द्वारा सत्ता के छद्म-चरित्र को खूबसूरती से बेनकाब करती है तो 'पक्की रिपोर्ट' चुटीले एवं सार्थक

संवादों के सहारे पुलसिया मानसिकता एवं कार्यशैली के प्रति एक वितृष्णा भाव पैदा करती हैं। जानवर, हरामी लोग, हरियल तोता, एक बेटे की कीमत; तालमेल, उम्मीद आदि लघुकथाएं लोगों के काइयापन एवं स्वार्थ के आगे अपना धर्म खोते जा रहे मानवीय रिश्तों को गहराई से रेखांकित करती हैं। औरत की भूख, पहला उपदेश, समानता, ठाकुर,–हंसुआभात, अभाव, बेटी, मुहूर्त, आदि लघुकथाओं में भूख, गरीबी और अभावों में जी रहे लोगों की बेबसी अन्तस को झकझोर देती है। ये सब घनीभूत मानवीय संवेदना की कथाएं हैं।

लघुकथाओं का कर्म मात्र यथार्थ से साक्षात्कार कराना ही नहीं है। बहुत सारी कथाएं सृजनात्मक भी हैं। इस तरह लघुकथा लेखन एक निराशावादी एवं नकारात्मक लेखन बन कर ही नहीं रह गया है बल्कि अपनी सृजनात्मकता के कारण उन आयामों की ओर दिशा संकेत करना है जिन्हें छूने पर समाज में वे अपेक्षित परिवर्तन आ सकते हैं जिनकी कि आज जरूरत है। क्रांति का मोड़, अन्तर्द्वन्द्व, प्यार भरी रोटी, सतह से ऊपर, पहचान, सामूहिक यथार्थ, नामकरण, उष्ण लहर, समाधान, विकलांग, मनोबल, महामन्दिर आदि इन्ही स्वरों की लघुकहानियां हैं। ये सब हमें आश्वस्त करती हैं कि आज का लघुकथा लेखक इस विधा की गहराई एवं क्षमता को पहचानने लगा है। यही कारण है कि लघुकथा की संप्रेषणीयता उत्तरोत्तर सशक्त, संजीदा एवं सोद्देश्य होती जा रही है।

प्रस्तुत संकलन लघुकथा की इस क्षमता से आपकी पहचान करा सके, इसी में हमारे प्रयास की सार्थकता है।

मैं भाई कमर मेवाड़ी एवं किशन कबीरा का आभारी हूं जिनके सक्रिय सहयोग के कारण यह संकलन इतना शीघ्र आपके सम्मुख आ सका है।

राजसमन्द
18 मई, 1986

माधव नागदा

अंजना अनिल

☐

मुक्ति

जीवन की विषमताओं और विवशताओं से जूझते-जूझते. पति के लात-घूंसे झेलते-झेलते आखिर आज सुबह उसने तड़फ-तड़फकर दम तोड़ ही दिया। अन्तिम वक्त भी मरने वाली की आंखों से ढुलके आंसुओं की उसके गालों पर लकीरें थी। गमी में शरीक होने आयी उसकी तमाम रिश्तेदारिन बेहद खुश थी कि एकादशी के दिन तो कोई भाग्यवान ही परमात्मा को प्यारा होता है। इसे तो सीधा स्वर्ग मिलेगा। सुहागिन जो ठहरी।

☐☐

सुश्री अपर्णा चतुर्वेदी 'प्रीता'

☐

कील

सुहासिनी एक कील ना मिलने से परेशान हो गई थी। अपनी बनाई हुई पेंटिंग, वह रविदास गुप्ता को, दीवार पर टांग कर दिखाना चाहती थी। जैसे-जैसे फ्रिज के ऊपर रखी टाइम पीस की सुई पांच की ओर बढ़ती जा रही थी, सुहासिनी की बेचैनी बढ़ती जा रही थी।

रविदास गुप्ता ने एक बार पेंटिंग में आखिरी ब्रश से टच देते हुए सुहासिनी से कहा था - मिस सुहासिनी, पेंटिंग बनाना अलग बात है और उसे सही दीवार, सही एंगल और माफ़िक फ्रेम में मढ़ कर टांगना अलग बात है।

सुहासिनी ने कपड़े सुखाने वाले तार की कील को उखाड़ने की कोशिश की वह नहीं उखड़ी। हार कर सुहासिनी कमरे में लौट आई।

रविदास गुप्ता ने कमरे मे पेंटिंग को बेतरतीब पड़ा देखा तथा सुहासिनी को परेशान, तो चुपचाप पेंटिंग को उठाकर, फ्रिज के ऊपर एगल से रख दिया। फिर सुहासिनी से बोले — "टांगने के साथ-साथ रखना भी जानना चाहिए। आजकल के घरो में कीलें उखाड़ी और ठोकी नही जा सकती। वैसे मोची की दुकान से लेकर कारखाने तक इसका इस्तेमाल होता है। सुहासिनी, रविदास गुप्ता के बराबर मे खड़ी हो पेंटिंग को देखने लगी"" वह और भी आकर्षक हो उठी थी।

□□

अनिल जनविजय

□

युक्ति

इधर नेताजी काफी परेशान रहते थे। उनकी सैकड़ों एकड़ ज़मीन पर फटेहाल लोगो ने, भिखारियो ने, मजदूरो ने कब्जा जमा लिया था। उन्होने वहा अपनी झोपड़ियां खड़ी कर ली थी और रहना शुरू कर दिया था। जब तक नेताजी को इसकी खबर मिली तब तक काफी देर हो चुकी थी। वे उनके विरुद्ध कोई भी कार्यवाही करने मे असमर्थ थे क्योंकि चुनाव पास आ चुके थे।

चुनाव हुए। नेताजी लाखो वोटों से विजयी हुए क्योंकि उन्होने अपनी सैकड़ों एकड़ जमीन गरीबों को रहने के लिए दे दी थी। चुनाव के दौरान इसका जमकर प्रचार किया गया था।

चुनाव के बाद नेताजी को केन्द्र में मंत्री चुन लिया गया। मंत्री जी के मन मे अचानक एक युक्ति आयी और ज़मीन के डूबने से सम्बन्धित उनकी सारी समस्या हवा मे उड़ गयी।

अगले दिन अखबारो मे खबर छपी थी। सरकार ने गरीबो को और बेरोजगारो को रोजगार उपलब्ध कराने के लिए एक नया रेल डिब्बा कारखाना खोलने की योजना बनायी है। विशेषज्ञो ने इसके लिए मंत्रीजी की ज़मीन पसन्द की है। अतः सरकार उसका अधिग्रहण कर लेगी और उन्हें बाज़ार भाव पर ज़मीन कीमत का भुगतान कर दिया जाएगा।

सुना है, मंत्रीजी सरकार की इस योजना से नाखुश हैं।

□□

अविनाशचन्द्र 'चेतक'

□

महा-मन्दिर

एक धनी आदमी था। वह सदा कुछ न कुछ दान-दक्षिणा देता रहता था।

एकबार उसने एक बड़ा मन्दिर बनवाया। मन्दिर बहुत आलीशान था परन्तु उसमें केवल हिन्दू ही दर्शनार्थ जाते थे। यह उसे अच्छा नहीं लगा। उसने मन्दिर तुड़वा दिया। उसके स्थान पर एक विशाल मस्जिद बनवाई परन्तु मस्जिद में केवल मुसलमान ही जाते थे। उसने उसे भी तुड़वा दिया। उसी स्थान पर एक सुन्दर गुरुद्वारा बनवाया। गुरुद्वारे में केवल सिख ही जाते थे। उसने उसे भी तुड़वा दिया। फिर उस पर एक लम्बा-चौड़ा गिरजाघर बनवाया परन्तु गिरजाघर में केवल ईसाई जाते थे। इसलिए उसने गिरजाघर भी तुड़वा दिया।

अन्त में धनी आदमी ने उस स्थान पर विद्यालय के लिए एक विशाल भवन का निर्माण करवाया। उस विद्यालय में अब हिन्दू, मुसलमान, सिख व ईसाई सभी पढ़ने जाते हैं।

□

बेटी

बेटी का कद मां के बराबर तेजी से बढ़ता जा रहा था और एक दिन वह मां की साड़ी पहन कर बाज़ार चली गई।

पहले जब पिताजी सायं के समय घर लौटते तो मां बरस पड़ती, "घर में नमक नहीं है, दाल नहीं है, आटा नहीं है।"

परन्तु अब मां पिताजी के आने पर चुपचाप उन्हें चाय का कप थमा देती है और टकटकी लगाकर देखती रहती है मानो पूछ रही हो, 'क्या अपनी शशि के लिए किसी योग्य वर का पता चला ?'

□□

अशोक भाटिया

□

शिक्षा

सड़क के किनारे गीली रेत में वे दोनों रोज़ की तरह घर-घर खेल रहे थे।

पिंटू के पापा दफ्तर से लौटे तो उसे रामलाल के साथ देखकर गुस्सा हुए— पिंटू ! चलो घर।

उसकी सिट्टी पिट्टी गुम हो गयी। घर पहुंचने तक वह बचने के तरीके सोचता रहा।

पापा ने बुलाकर कहा—तुम्हें रोज़ कहता हूं कि उसके साथ मत खेला करो, अपने बराबर वालों से खेलो।

—पापा वो भी तो फोर्थ में पढ़ता है।

—अरे निम घटिया स्कूल में पढ़ता है। तुझे पता है ? ये छोटे लोग हैं। तुम घर पर चाइनीज़ चेकर, चेस खेल लिया करो।

पापा को देखती, पिंटू की आंखों में डर और गुस्सा-दोनों थे।

—बेटे, अगर आगे बढ़ना है तो ऐसे लोगों में मत घुलो मिलो। दे आर डर्टी पीपल। देखा नहीं, उसकी नाक कैसे बह रही थी ?

पिंटू के मन में दबी बात अपने आप बाहर आ गयी। पापा, मेरा मिट्टी में खेलने को बड़ा मन करता है।

पापा आगे कुछ कहे, इससे पहले पिंटू की मां उसे ले गयी। पिंटू ने कहा— मां, मैं रिंकू के घर चेस खेलने जा रहा हूं।

कहकर वह फर्राटे से सड़क के किनारे आ गया और रामलाल के साथ घर-घर खेलने लगा।

□

मां-बाप

—क्या करूं, मैं तो परेशान हो गयी हूं। तीन दिन से बेचारी का पेट चल रहा है।

कोई चिन्ता न करो, गर्मी का मौसम ही ऐसा होता है और फिर बच्चे के साथ यह तो चलता ही है।

मां शालू की बांह उठाकर कहती है—जरा देखो तो, सेहत कैसी निचुड़ गयी है। सारा दिन चहका करती थी, अब बेचारी की आवाज तक नहीं निकल पाती।

पिता शालू को देखता रहता है। शालू के सिर पर हाथ फेरते-फेरते मां की आंखें छलक पड़ती हैं। पिता अपनी भावनाओं को रोकते हुए पत्नी के कंधे पर हाथ रखता है—घबराने से क्या होगा? अबकीबार उत्तमचंद डॉक्टर की दवा दी है। उससे बड़ा डॉक्टर इस कस्बे में कोई नहीं है।

डॉक्टरों का भी क्या भरोसा है? कस्तूरीलाल ने इसे सब कुछ खिलाने को कहा था और इसने दूध तक बन्द कर दिया है।

अपना-अपना तरीका होता है। सब ठीक हो जाएगा।

तभी शालू के कपड़े फिर खराब हो जाते हैं। मां घबराहट में उसका लंगोट बदलती है।

शालू बेटे, तुझे क्या हो गया? जल्दी से ठीक हो जाओ बेटे। मां की आवाज में बहाव है। शालू चुप आखों से एक पल मां को देखती है, फिर निढ़ाल होकर सो जाती है।

शालू की हालत देखकर मां की आंखों में संकट का भाव आ गया है।

—एक बात कहूं।

—हां हां बोलो।

—लगेगा तो अजीब। शालू को रामप्रसाद ज्योतिषी से तावीज़ दिलवा देते हैं, शायद·······

—तुम जानती हो, हम दोनों इन टोटकों में विश्वास नहीं रखते फिर····

—प्लीज़, बच्ची की खातिर।

□□

आनन्द बिल्थरे

□

पक्की रिपोर्ट

"हजूर, रिपोर्ट लिखानी है।"

"अबे, काहे की रिपोर्ट ? कच्ची लिखूं या पक्की ?"

"मैं कच्ची पक्की क्या जानूं सरकार। गई रात, डाकू मेरी जवान बिटिया को उठा ले गए।"

"अबे तो हम क्या करें ? तूने पहले रिपोर्ट क्यों नहीं लिखाई कि तेरी जवान बेटी भी है ?"

"कुछ उपाय करो हजूर।"

"कैसा उपाय ? क्या तेरी लौंडिया हमारी जेब मे रखी है ? साले, लगता है तू भी डाकू से मिला है।"

"हजूर, माईबाप, मेरी बिटिया नादान है।"

"अरे, अब कहां की नादान रही। तेरी लौंडिया तो दूसरी फूलन बनेगी फूलन।"

"जात-बिरादरी में मेरी नाक कट जाएगी हजूर।"

"साले, नाक की इतनी ही फिकर थी, तो उसे थाने में जमा क्यों नहीं करा दिया ?"

"साहब, डाकू लोग मेरी दूसरी बिटिया को भी उठाने की धमकी दे गये हैं।"

"अच्छा, तो तेरे दूसरी लौंडिया भी है ? अरे बैठ, बैठजा। कितनी बड़ी है तेरी छुकरिया ?"

"ऐसी ही कोई तेरह-चौदह बरस की हजूर।"

"अच्छा-अच्छा जा। तेरी पक्की रिपोर्ट लिख ली है। कल हम तफतीश को आयेंगे।"

""सुनते हैं, दूसरे दिन उसकी दूसरी बिटिया भी उठा ली गई।

□□

कमल चोपड़ा

जानवर

फैक्टरी के लिए हम तो अब लड़के ही रखते हैं जी। तेरह चौदह साल के लड़के को जब चाहे डांट फटकार लो। पूरी उम्र का आदमी कहां बर्दाश्त करता है। भला मंहगे भी कहां पड़ते हैं ये लड़के। साठ-सत्तर रुपया और रोटी""

लेकिन साथ वाली फैक्टरी का मालिक हरनाम बता रहा था कि यह तो "सिर्फ रोटी" पर नौकर रखता है। तन्खा ठहराने के वक्त जितनी वे कहें मान लेता है पर देता कभी नही। तन्खा तो नौकर से हुए नुकसान या टूट-फूट में काट लेता है। अगर किसी नौकर से नुकसान ना हो तो उसकी तन्खा जब तक हो सके टालता रहता है। आठ दस महीने बाद जब नौकर तनख्वाह लेने को झगड़ा करता है तो वह उस पर चोरी का इल्जाम लगा कर भगा देता है। वकैर ज्यादा टीं-टां करे तो थाने में पचास चढा कर पांच सौ बचा लेता है"" उसका असूल है जी कि जानवर को जिन्दा रखो और काम लो "" ""

मैं तो जी अब खुद इसी बात पर आ गया हूं। मैं भी अब ऐना मुंडयां नूं तन्खा नई देता, सिर्फ कह देता हूं कि दूंगा पर बाद मे।

अभी कल की बात है जी वो लड़का जो सामने खिडर पर काम कर रहा है ना, कहने लगा "" मालिक मुझे किसी ने बताया है कि इधर के मालिक लोग किसी नौकर को तन्खा नहीं देते। सिर्फ रोटी पर पर रखते हैं"" "मैंने कहा"" तुझे किसी ने बहका दिया है। फिर भी तूने काम करना है तो कर वर्ना ""पुट्टी ला"""" लड़का रोने लगा-मेरी मां गांव मे बीमार है। भूख की वजह से"" आप कुछ तन्खा देंगे तो घर भेज दूंगा। आप कहें तो मैं रोटी नही खाऊंगा। मैंने पूछा अबे रोटी नही खायेगा तो जियेगा कैसे? तो बोला "" एक टाईम खा लूंगा। एक टाईम खाने से मरूंगा नहीं। मेरी मां तो तीन-तीन दिन भूखा रह लेती थी। हमें भूखा नहीं रखती थी"" मेरे एक टाईम खाना छोड़ने से जो कुछ आप देंगे मैं गांव भेज दूंगा वर्ना मां मर जाएगी "" अब जी कोई मरे या बचा रहे"" करोड़ों है। किसकी सोचें ? मैंने कह दिया कि ठीक है। पैसे दे दूंगा""पर""अब अगर इस का काम एक टाईम खाने से चल जाए तो हमें क्या पड़ी है इसे दोनों टाइम खाना देने की"" बाकी रही इसकी मां तो उसे जिन्दा रखने का लाभ""हमें क्या ""

उष्ण लहर

नारायण बाबू रोड के फुटपाथ के जिस हिस्से पर फन्ने खोमचा लगाता था वहां सुबह-सुबह काफी सारी भीड देख कुछ अनहोनी के अंदेशे से वह जल्दी से अपनी छोटी अंगीठी, परात भगौना आदि एक साईड मे रख वहां पहुंचा। पूछा तो पता चला कि बूढ़ी भिखारिन अमरी रात ठंड मे मर गई। अभी कल ही बड़ी पार्क के भव्य जलसे मे उसे गर्म कम्बल दिया गया था। फोटुएं भी खिची थी जो कि आज की सारी अखबारों मे छपी है। बूढ़ी को जो कम्बल मिला था वह तो सिपाहियों ने रात ही को जबरदस्ती छीन लिया था। इससे तो अच्छा था कि इसे कम्बल न मिलता''' बेचारी ने तीन चार बोरियों को सीकर अच्छी खासी रजाई सी बना रखी थी। गुजारा चल ही रहा था। इसे कम्बल मिला तो इसने बोरी उठाकर किशनगंज पुल के पास भीख मांगने वाली अपनी बेटी को भिजवा दी कि अब यह मेरे किस काम की और फिर बेटी को बोरी ही सही कुछ देने का अपना कर्ज फर्ज तो उतरेगा कुछ '''कम्बल रात ही को छिन जाने से वह इधर की रही ना उधर की''' ।

अमरी का हश्र देख कर फन्ने अपना खोमचा भूल कर लोगों को पीछे हटाता हुआ बोला''' अरे वो लगडा झिमकू इस बुढिया का मुंह बोला बेटा है" किसी ने उसे भी खबर दी कि नही" ? वो दीवान चन्द पार्क मे सोता है। चलो उसे बुला लाये" साला अफीम खाकर अभी सोया पड़ा होगा''''।

फन्ने वहा पहुंचा तो लंगडा झिमकू बड़ी जोर-जोर से कराहता हुआ रो रहा था। कुछ पूछने से पहले ही वह बोल उठा" कोई मुझे अस्पताल पहुचा दो''''रे, कल मुझे भी एक कम्बल मिला था। रात को खाकी सिपाहियो ने कम्बल वापस मागा। मैंने देने से इन्कार किया तो उन्होंने जबरदस्ती छीन लिया और इतनी जोर से टांग पर डण्डा मारा कि मेरी दूसरी टाग भी तोड़ दी '''हायरे''''एक टांग तो पहले ही से''''दूसरी की घुटने से नीचे की हड्डी तोड़ दी सालों ने। हाय" हाय दर्द से जान निकली जा रही है''''रात से छटपटा रहा हूं'''' कोई मुझे अस्पताल पहुंचा दे'''

उसके बुरी तरह रोने कराहने, छटपटाते हुये जमीन पर हाथ मारने से वहां जुड़ आये लोग दहशत से गड़े रह गये'''' कुछ शीत लहर के प्रभाव से कांपते हुवे गरीबी की लानत, पिछले कर्मो के फल, भगवान की मर्जी, अन्धेरगर्दी

और आदमी की लाचारी बेबसी पर चर्चा करने लगे""राम राम राम। कैसा बुरा वक्त आ गया है।

फन्ने एकाएक भड़क उठा""इस सबके जिम्मेवार तुम सब ठण्डे लोग ही हो। तुम्हारा ये ठण्डापन ही इस तरह मरवा रहा है और उन्हें जुल्म करने को मजबूर कर रहा है। तुम्हें यह सब देख सुन कर आग क्यों नहीं लगती""।

□□

कमलेश भारतीय

□

महत्व

—मांजी, आज का अखबार आ गया क्या ?

—हां, बहू, छोटा देख रहा है""

—पहले ऊपर दे जाओ, मांजी"" ! इनके दफ्तर का वक्त हो रहा है"" छोटा तो सारा दिन घर पर ही रहता है"" आवारागर्दी न करके अखबार देख लिया करे""

मांजी समझ नहीं पा रही थी कि किसे पहल दें ? कमाऊ-पूत को या बेकार सपूत को ? ? ?

□□

कृष्ण किसलय

□

पहला उपदेश

एक बार एक नगर में एक सिद्ध महात्मा पधारे हुए थे। नगर में उनके भक्तों ने एक व्याख्यानमाला का आयोजन किया था जिसमें प्रतिदिन वे प्रवचन करते

थे। उनके उपदेशमय व्याख्यान का लोगो पर यथोचित प्रभाव पड़ रहा था। उनके भक्त खूब प्रसन्न थे। व्याख्यानमाला में लोगो की भीड़ दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही थी।

एक दिन अचानक सिद्ध महात्मा के पास उनके कुछ अति श्रद्धालु भक्त दुखी मन पहुंचे। महात्मा ने उनके व्यथित होने का कारण पूछा। भक्तो ने कहा–महात्मन् आपके उपदेशों से सभी तरह के लोग खूब प्रभावित हो रहे है और उन्हे लाभ भी प्राप्त हो रहा है किन्तु व्याख्यान-मंडल से कुछ दूर बैठे एक भिखारी पर आज तक कोई प्रभाव पड़ता हुआ हमे नही दिखा है।

सिद्ध महात्मा मुस्कराये, उन्होने कहा- "कल उस भिखारी को मेरे पास ले आओ। मैं उसे उपदेश दूंगा।"

दूसरे दिन भक्तों ने उस भिखारी को महात्मा के समक्ष उपस्थित किया। महात्मा ने भक्तो से कहा- "इसे भरपेट खाना खिलाओ और जाने दो।"

भक्तो ने आज्ञा का पालन किया, लेकिन उनके मन में कौतूहल हो रहा था। उन्होंने आश्चर्य व्यक्त किया- "महात्मन्, आज आपने भिखारी को उपदेश देने के लिए बुलाया था, किन्तु उसे आपने भरपेट खाना खिलाकर वापस क्यो भेज दिया?"

सिद्ध महात्मा मुस्कराये और कहा– वत्स, कई दिनों के भूखे उस भिखारी के लिये भरपेट भोजन ही आज का पहला उपदेश था। इसके बाद उस पर अन्य उपदेशो का प्रभाव पड़ने लगेगा।

□□

कृष्ण शंकर भटनागर

□

बुरा असर

"हां तो अब बता यहां क्या परेशानी है?" बेटी के विवाह से निपटने के पश्चात् तीन भाइयों में सबसे बड़े भाई ने तीसरे नम्बर के अनुज से पूछा।

"परेशानी की क्या बात है ? मां बीमार है, वह पोती की शादी में भी ना आ सकी " और सच पूछो तो तुमने भी नही चाहा था कि वह आती"" वरना उन्हें खुद लाते "' खैर""" छुटका बड़ी बेबाकी से बोला, अब मां को सब लोग बारी-बारी से ही अपने पास रखें। अकेले मेरे बस "।

ठीक है मंझले भाई तैश में बोले, "हमने भी सारी उमर किया है। उनका। अब दस सालों से ही हाथ रोका है, सोचा है तू तो वहाँ है ही""। वहां रहकर क्या मकान का किराया नही बचाता ?"

"नही रहूंगा वहां"" किराये का मकान लूंगा, बस। छुटके ने जवाब दिया।

"पर मां कही 'एडजेस्ट' नही हो सकती " " बड़े भाई साहब बोले, "उन्हें वहीं पर रहने की आदत पड़ गयी है ! फिर हम भी रिटायर होने वाले हैं।"

"एडजेस्ट तो करना होगा-क्या करें ? मां तो मां है""चार""चार महीने सब रखेंगे।" छुटका पूरी तैयारी से आया था।

"रखना अपने बस का नही है " " मंझले की पत्नी बोली, "हमसे हाथ जुड़वा लो भई""निगाह उनकी वैसे ही कमजोर है "'।"

"एक मां अकेले कई-कई बच्चों को पाल लेती है कितने मजे की बात है। सब बेटे मिलकर एक मां को नही पाल सकते "'।" घर के दामाद ने बात उठाई। मंझले ने आक्रोश प्रकट किया, "जिन्हें कुछ करना ही नही वे बीच में क्यूं बोलते हैं ?"

इससे पूर्व कि विवाद आगे बढ़े बड़े भाई साहब ने इशारे से सबको रोकते हुए कहा- अभी सब चुप रहो। बच्चे आ रहे है उन पर बुरा असर पड़ेगा""।"

बच्चों के आगमन ने मां के बटवारे की समस्या फिर लटका कर रख दी""।

□□

कुमार मनोज

□

एक उलटवासी

सिच्युवेशन एक है""

सुनसान गली, एक तरुणी चली आ रही थी"" वह नजदीक आयी। कोई हरकत नही"" वह दो कदम आगे निकल गया। तब वह घबड़ा गया जब पीछे छूटी तरुणी आकर उससे लिपट गयी।

"यह क्या हो रहा ?" वह घबराया।

"सुनसान गली, काली अंधेरी रात तुम अच्छी तरह समझ सकते हो क्या होना चाहिए।" वह उनके गले से लिपटी हुयी थी।

"यह पाप मुझसे न होगा।" वह गले से फसे हाथ को छुड़ाने में सफल हो गया।

"तुम में वह शक्ति नही। तुम कुछ कर सको तुम मर्द नही""।" वह फुफकार उठी।

सोचत हुआ, उसने इस सिच्युवेशन से उस सिच्युवेशन की तुलना की। कही कोई भी असमानता थी""काली अंधेरी रात""एक तरुणी""सुनसान गली""सूखते गले में थूक गटक कर, वह उस पर झपट पड़ा।

"यह क्या हो रहा ? तरुणी चीख पड़ी।

"सुनसान गली, अंधेरी रात "" तुम अच्छी तरह समझ सकती हो क्या होना चाहिए। उसने कसाव सख्त कर दी।

"हरामजादे, कुत्ते, कमीने"" तुम मर्द सब भेड़िये हो " भेड़िये।" यह वाक्य सुन उसके कसाव अपने आप ढीले हो गये।

अब भी गली में खड़ा दोनों सिच्युवेशन की तुलना कर रहा था।

□□

…दान "कबीरा"

□

…सतह से ऊपर

आतंकवाद का दौर उन पर भी करारी चोट कर गया। कॉलेज से लौट रहे उनके लड़के को एक आतंकवादी बुरी तरह ज़ख्मी कर गया। उनका लड़का मौत से जूझ रहा था।

आज जब वे रोगियों की जांच में व्यस्त थे, तब पुलिस उस आतंकवादी को गिरफ्तार कर ज़ख्मी अवस्था में चिकित्सालय लेकर आयी। उसके शरीर से काफी मात्रा में खून निकल चुका था और हालत चिन्ताजनक थी।

उसे देखते ही उनका शरीर क्रोध से धधकने लगा। उन्हें कुछ नहीं करना था। कुछ देर की टालमटोल ही उसके प्राणपखेरू उड़ाने के लिये काफी थी।

तभी अचानक कहीं से शीतल बौछार हो गयी, वे स्वयं को रोक नहीं सके और जी जान से उसे बचाने की कोशिश में जुट गये।

□□

घनश्याम, अग्रवाल

□

आजादी की दुम

रावण का वध करके राम अयोध्या लौट आये। युद्ध में जौहर दिखलाने के उपलक्ष में हनुमान को मंत्री पद सौंपने का राम ने निश्चय किया किन्तु हनुमान ने मंत्री पद लेने से इनकार कर दिया और कहा, "मैं शेष समय जंगलों में बिताऊंगा।"

देखते-देखते पच्चीस वर्ष बीत गए। हनुमान अब बूढ़े हो चुके थे, वृक्षों पर चढ़कर फल तोड़ने में उन्हें काफी कष्ट होता था। अचानक उनको खबर

मिली कि अयोध्या में आजादी की रजत-जयन्ती मनाई जा रही है। इसमे राम रावण-युद्ध मे भाग लेने वालों को ताम्रपत्र तथा दो सौ रुपये मासिक पेंशन दी जायगी। हनुमान की तकलीफ दूर हो गई। सोचा, चलो बुढ़ापे का इन्तजाम हो गया। उन्होंने भी पेंशन के लिए आवेदन कर दिया। काफी दिनों तक जब पेंशन की स्वीकृति न मिली तो हनुमान ने स्वयं अयोध्या जाने का निश्चय किया।

पच्चीस वर्षों में अयोध्या काफी बदल चुकी थी। कुछ परिचित बंदर मिनिस्टर बने घूम रहे थे। उन्होंने हनुमान को पहचानने से इन्कार कर दिया। इतनी सी बात के लिए राम के पास जाना उचित नहीं, यह सोचकर वे, स्वतन्त्रता सैनिक पेंशन विभाग के दफ्तर पहुंचे, और अपनी पेंशन के बारे में पूछताछ की, लेकिन बाबू ने कहा, 'आपका आवेदन पत्र नहीं है।"

"मगर मैंने तो रजिस्ट्री से भेजा था।" एकनालिजमेंट दिखाते हुए हनुमान ने कहा।

चपरासी ने हनुमान को एक तरफ ले जाकर समझाया कि जब तक अर्जी पर वजन नहीं रखोगे, तब तक समझो वह आई ही नहीं। आई भी है तो आगे नहीं सरकेगी।

"मगर ये वजन क्या होता है?" हनुमान ने भोलेपन से पूछा।

चपरासी ने हसते हुए कहा, "बन्दर हो न तुम्हारे पास पैसे तो नहीं होंगे। तुम कुछ फल तोड़कर बाबू को देदो। इसे ही सरकारी जबान मे वजन कहते हैं।"

"मैं अब बूढ़ा हो गया हूं। राम-रावण युद्ध मे तो पहाड़ उठाया था। पर अब तो छोटे से पेड़ पर भी नहीं चढ़ सकता। इसीलिए तो पेंशन के लिए अर्जी दी है।" हनुमान ने अपनी विवशता प्रकट की।

चपरासी कुछ देर सोचता रहा। अचानक उसकी आखों मे चमक आ गयी। वह बोला, "एक उपाय है, आजकल फॅशन में बन्दरों के दुम की बड़ी माग है। तुम दुम का कुछ हिस्सा काटकर बाबू को दे दो। अर्जी आगे बढ़ जायेगी, और हां मैंने उपाय बताया है सो मुझे भी चाय पीने को चार इन्च का टुकड़ा जरूर देना।"

हनुमान के तन-बदन मे आग लग गई। बन्दर को अपनी पूंछ उतनी ही प्यारी होती है जितनी आदमी को अपनी मूंछ और, आज भी बन्दरों ने आदमी

की तरह अपनी इस शानदार परम्परा को नहीं छोड़ा। हनुमान सोचने लगे कि इसी दुम के अपमान के कारण मैंने लंका में आग लगा दी थी। पर यह तो अपने राम की अयोध्या है। फिर अपनी माग पूरी न होने पर अपनी सम्पत्ति में आग लगा देने वाला नादान भी नही हू। जी में आता है इन बाबुओं को ही उठाकर फेंकदूं। मगर हां आजकल कानून हाथ में लेना भी तो जुर्म है।

'मजबूरी का नाम विभीषण' यह प्रचलित कहावत याद आते ही वे चुपचाप सर झुकाये बाबू के पास पहुंच गये। उनकी दुम कुछ छोटी हो गई और अर्जी कुछ आगे सरकी। वहां का बाबू पहले से ही कैंची लिए बैठा था, अर्जी उसके पास आते ही उसने भी दुम का कुछ हिस्सा काट लिया।

इस तरह जैसे-जैसे दुम कटती गई, वैसे-वैसे हनुमान वल्द पवन की अर्जी आगे बढ़ती गई और जब अर्जी पर पेंशन की मंजूरी की मोहर लगी, हनुमान बिना दुम के हो गये। जो रावण के राज्य में भी सही सलामत रही, वही आज राम राज्य में घट गई। वे जाते-जाते धमकी दे गये, "मैं इस भ्रष्टाचार की कहानी अवश्य राम तक पहुंचाऊगा। मेरा नाम राम भक्त हनुमान है, हनुमान।"

सारे आफिस में खलबली मच गई, क्योंकि उन्होंने सुन रखा था कि कोई हनुमान है जो राम का खास आदमी रहा था किन्तु संबन्धित आफिसर ने क्लर्कों को समझाया, "तुम डरो नहीं। तुमने जो कुछ किया गलत नहीं किया, आफिस की परम्परानुसार ही किया है। 'रघुकुल रीति सदा चली आई' के अन्तर्गत। मैं इस बन्दर को देख लूंगा।

अगले दिन हनुमान जालसाजी के आरोप में गिरफ्तार हो गये। उन पर आरोप लगाया गया कि इस बंदर ने हनुमान के नाम पर पेंशन लेने का प्रयत्न किया है, जब कि ये हनुमान नहीं हैं। सबूत में बताया गया कि हनुमान के एक लम्बी दुम थी और इस बंदर के दुम ही नहीं है। अतः यह हनुमान नहीं है।

□□

घनश्याम बैरागी

□

दुर्घटना

पोस्टमैन ने रेणू को लिफाफा पकड़ाया। रेणू ने जल्दी से लिफाफा खोलकर चिट्ठी पढ़ी। लिखा था—

रेणू,

कुछ समय पूर्व चांदनी चौक पर मोटर साइकिल के धक्के से मेरे पति की मृत्यु हो गई थी। उनके बिना मेरा जीना बेकार है। मैं भी इस दुनिया से विदा ले रही हूं। मेरा एक छोटा बच्चा है। उसकी परवरिश का भार तुम्हें सौंप रही हूं। उसकी देखभाल करना।

तुम्हारी
सलमा

पत्र पढ़कर रेणू की आंखों में आंसू छलक आए। तभी रेणू के पति चन्द्रकान्त आ गये। उन्होंने मिठाई का डब्बा रेणू को पकड़ाते हुए कहा— "रेणू, देखो मैं क्या लाया हूं कुछ दिन पहले मेरी मोटर साईकिल से चांदनी चौक पर एक दुर्घटना हो गई थी। तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण मैंने तुम्हे बताता नहीं था। आज अदालत ने मुझे उस केस से बाइज्जत बरी कर दिया है।"

रेणू की आंखो के आंसू गालों पर बह आए।

□□

चांद मुंगेरी

□

ठाकुर-हंसुआ-भात

—"अम्मा ! भूख लगी है, हमका भात देय दाँ अम्मा।"

—थोड़ा धान और रूप बचुआ। धान गेल होः माड़ुआ पिसावे खातिर मिल···· इतना ओकरे ही तोहरा रोटी बना दे थोः।

मां के आश्वासन भरे शब्द भी बबुआ को आश्वस्त न कर सके''' वह ठुनक कर बोला-रोटी ! मड़ुआ की ? अम्मा, आज दू दिन के बाद तू हमका खिलैयबेउ भी तो रोटी-ऊ भी मड़ुआ की ?

—तब तोहका और का चाही खीरे-पुड़ी ?

मां खीजकर बोली, मां के क्रोध को पचाकर बबुआ ने खुशामदी स्वर में कहा—'अम्मा, हमका भात देय दो अम्मा, बहुत जी चाहे है भात खावेउला।'

—अरे करमजला, अब ही साल भर पहले जब बड़का ठाकुर मरा राहा तो तू हुनका मरण-भोज में भात खाया कि नही''' बोल ?

—हां ! खाया राहा.... ! लेकिन अम्मा, का ई दूसरा ठाकुर नाही मरेगा ?

—मरेगा कैसे। बड़का को चोर मारा राहा''' हिनका कौन मारेगा''' ?

मां के प्रश्न को सुन बबुआ की पकड़ हंसुआ पर सख्त हो गई''' अब उसके समक्ष था सिर्फ—

ठाकुर''' हंसुआ भात।

ठाकुर हंसुआ''' भात।

□

पहचान

अस्सलामो अलैकुम अंकल''' !

मैं असलम भाई के घर ज्योंही प्रवेश करता हूं उनका आठ वर्षीय पुत्र मुझे सलीके से सलाम करता है। मैं स्तब्ध सा खड़ा सोचने लगता हूं''' "क्या तहज़ीब सिखाई है असलम भाई ने बेटे को''' !

मुझे इस प्रकार स्तब्ध देख असलम भाई ने अन्यथा लिया शायद, तब ही तो एक आदेशात्मक स्वर में कहा– बेटे, मयंक को प्रणाम करो''' !

"लेकिन अब्बू''' ! बच्चा झिझक रहा था– "कल जब मैंने सुलेमान अंकल को प्रणाम किया था तो आपने डांटते हुए कहा था मज़ल को सलाम करो।

"हां और तब यह भी समझाया था कि किसे सलाम करना चाहिये और किसे प्रणाम।"

"हा अब्बू, मुझे याद आया, आप ने कहा था कि मुसलमान अंकल को सलाम करना और हिन्दू अंकल को प्रणाम ''' !

पर अब्बू'''' ! मैं पहचानूंगा कैसे कि आनेवाले अंकल हिन्दू हैं या मुसलमान ? ? "

□□

चांद शर्मा

□

इक्कीसवीं सदी

एक टूटी-फूटी झोपड़ी मे एक छोटा बच्चा अपनी मां की सूखी छातियों से दूध की बूंद निकालने को संघर्ष करता है और जब दूध नही आता तो बिलख बिलख कर रो-रो कर अपना बुरा हाल कर लेता है।

दूसरा बच्चा रोता हुआ आता है और कहता है– 'मां, मास्टर जी ने मेरा नाम काट दिया है'''' मुझे स्कूल से निकाल दिया है'''' बापू ने झूठ कहा था कि मेरी फीस पहुंचा देंगे'''' ।

बाहर एक शोर है। शायद बच्चों का मजदूर बाप आया है ''' मजदूरी लेकर'''' फीस लेकर– मगर नही ।

कुछेक मजदूर साथियों ने एक लाश को उठाया हुआ है– यह चर्चा है कि सेठ बद्रीप्रसाद की तीसरी नई बन रही बिल्डिंग की तीसरी मंजिल से पांव फिसला और नीचे सड़क पर खून से लथपथ लाश''''

झोपड़ी चीखों-पुकार मे भर गई है छोटा बच्चा, जो अभी रो रहा था, टकटकी बांधे भाते सोये बापू को निहार रहा है ''' वो विधवा औरत और सात मास का बच्चा लाश से लिपट रहे है '' ज़ार-ज़ार रोये जा रहे हैं जैसे सोने वाले को जगा रहे हों''''

और मंच पर एड़ियां उठा-उठा कर, हाथ हिला-हिला कर एक नेता जन सभा को सबोधित कर कह रहा है– 'साथियों, हम इक्कीसवीं सदी की ओर बढ़ रहे हैं'''' ।

□□

चित्रेश

□

अन्तर्द्वन्द्व

बस रुकी । एक कृशकाय बुढ़िया सवार हुई । बस ठसाठस भरी थी । सीट के अभाव में बुढ़िया उसके पास वाले डंडे का सहारा लेकर खड़ी हो गई । उसने देखा, बस मुड़ने लगती या भीड़ वाले स्थान पर धीमी होती तो बुढ़िया–अब गिरी, तब गिरी–का बुरी तरह अहसास कराती हुई आगे-पीछे भूल जाती ।

वह ठहरा संवेदनशील व्यक्ति ! उसके अंतरमन की संवेदना जाग उठी । बोली– 'तुम अपनी सीट बुढ़िया को दे दो ।'

'क्यों''''? '– स्वार्थ चुप न रह सका । उसने प्रतिरोध किया- 'आखिर और लोग भी तो हैं, फिर तुम ही क्यों परेशानी झेलोगे ? बेकार की पचड़ेबाजी में मतई मत पड़ो ।'

उसके अन्तरमन में स्वार्थ और संवेदना के बीच संघर्ष शुरु हो गया । वह मूक दर्शक बना दोनों की उठा-पटक देखता रहा । कुछ देर बाद संवेदना ने स्वार्थ को धर दबोचा । स्वार्थ की बोलती बन्द हो गई । संवेदना विजयी भाव से सिर उठाने को हुई, इसी बीच बस एक झटके से स्टाप पर रुक गई। इस बार बुढ़िया सभल न पायी और गिर पड़ी । उसने बिजली जैसी तेजी से उठकर चोट खायी बुढ़िया को संभाला और कहा-'मांजी, आप मेरी सीट पर बैठें । मैं खड़े-खड़े चल लूंगा ।'

'जुग-जुग जियो बेटा ।' बुढ़िया कराहते हुए बोली- 'आराम से बैठो, मुझे यहीं उतरना है ।'

□

हरामी लोग

सर्द रात थी। नशे में झूमते दो युवक होटल से बाहर आये और सड़क पार पोल-लाइट के नीचे खड़े रिक्शे के पास पहुँच गये। आहट पा, रिक्शे पर गठरी की शक्ल में बैठा चालक नीचे आ गया।

'यमुना कलोनी.... ' बोलने वाले युवक के आगे के शब्द हल्की हिचकी में दबकर रह गये।

सहमति सूचक ढंग से सिर हिला, रिक्शेवान अपनी लम्बी-छरहरी देह पर थोड़ी लुंगी कान के इर्द-गिर्द लपेटने लगा। इस बीच दोनों सवारियां रिक्शे पर बैठ गई थीं। अगले क्षण थोड़ी दूर रिक्शा घसीटकर चालक भी अपनी गद्दी पर आ गया। उचक-उचक कर पैंडिल मारते हुए रिक्शे को तीव्र गति देने के पीछे जर्जर सूती कपड़ों से ढकी हड्डियों तक ठिठुरती काया में परिश्रम से उत्पन्न गर्मी भरने का उपक्रम था या ऐसे अवसरों पर मिलने वाले अच्छे किराये की खुशी-बुद्ध कहा नहीं जा सकता।

हां, रिक्शे की बढ़ती हुई गति के साथ युवकों के चेहरे से टकराती हवा बर्फीली सी हो गई थी। जिससे उनका नशा हिरन होता प्रतीत होने लगा। उड़ती चेतना जमीन से जुड़ने लगी तो एक ने कुछ सोचते हुए कहा- 'यार वर्मा! खास बात तो मैंने पूछी ही नहीं?'

'कौन-सी बात?'

'तुम रामदयाल ठेकेदार से मिले!'

'वाह रे सतीश, इतनी महत्वपूर्ण बात तो मैंने बताई ही नहीं!' -सिग्नल पुलिस की चौकी के तेज प्रकाश के बीच से गुजरते हुए रिक्शे पर बैठे दुबले पतले वर्मा ने मोटे थुलथुल जोड़ीदार की तरफ देखकर बताया- 'ठेकेदार हमें मिट्टी, बालू और मोरंग की सप्लाई देने को राजी हो गया है।'

सतीश ने वर्मा की जांघ पर धौल जमायी और कहा- 'वेरी गुड! कल इस खुशी में मेरी तरफ से पार्टी....'

रिक्शा धीमा होने लगा। सतीश ने बात अधूरी छोड़, निर्देश दिया- 'अगली गलि से दायीं तरफ मुड़ लो।'

थोड़ी देर बाद वांछित फ्लैट के सामने रिक्शा रुकवाकर वे उतर गये। वर्मा ने झट दो रुपये का नोट जेब से निकाल, रिक्शेवान की ओर बढ़ा दिया-'ये लो।'

'यह क्या बाबूजी ?' -उसने ठिठुरते हाथ सीने पर बांधते हुए कहा- 'पांच से कम नहीं होता यहां का किराया।'

'इतना कैसे हुआ बे ! बाप का राज समझ रखा है क्या ?' -संतोष तैश में आ, रिक्शावाले को मारने लपका तो वह भी ताव खा गया।

तभी कालोनी में गश्त देने वाला सिपाही रामसिंह गली से निकला और आवाज पहचान कर आगे बढ़ आया। बोला-' क्या बात है, ठेकेदार साहब !'

'यही बेहूदा सीनाजोरी कर रहा है।'

रामसिंह ने मूछों पर ताव देते हुए बेंत फटकारा और पुलिसिया रौब से चालक को दफा कर दिया। तत्पश्चात इन लोगों की तरफ मुखातिब हुआ-'हरामी लोगों के मुंह लगना ठीक नहीं। जाइये आराम से लेटिये। आज की ठंड में तो मेरी दांती बज रही है।'

'थोड़ी-सी लगा लिए होते।' -संतोष मुस्कराया।

'महीने का आखिर चल रहा है। ऐसे में दारू के लिए कहां से पैसे आयें ?' स्वर की बनावटी लाचारी साफ जाहिर थी।

'अच्छा तो यह बात है।' संतोष ने वर्मा की तरफ देखते हुए कहा- 'यार, दे चीफ साहब को पांच का पत्ता। अपने खास हैं।'

वर्मा से नोट लेता, रामसिंह घनी मूछों के नीचे कुटिलता से मुस्करा रहा था।

□

बदलता रंग

खड़े-खड़े रामू को देख, बूढ़े मजदूरों साथ ने राहत की सांस ली। आगे के बदन में रखी टिमटिमाती लालटेन तेज करके [illegible] [illegible] [illegible] उसने अलाव में टहनियां डाल, फूंक मारने लगा।

कुछ क्षण बाद आग दहक उठी। इस बीच रम्मू सामान अन्दर रख, आग तापने बाप के पास आ बैठा था। बूढे ने पूछा-'इत्ती देर कैसे भई रे ! लेखा मिले मा झझट थी का ?'

जलती आग के सामने उलट-पुलट कर हाथ सेकते हुए बेटे ने जवाब दिया- 'लेखा तो जल्दिये मिल गया था। मुल आज बजारी मां एक घटना हुइ गयी थी, जेहिके मारे हमहू का देरि हुइ गयी।'

'केसि घटना रे, हमहूं का बताउ।' -असर्फी के झुरियो भरे चेहरे पर जिज्ञासा छलक आयी थी। उसने चादर के अन्दर से हाथ निकाल कर अलाव मे फिर से चैलियां डाली और बेटे की तरफ देखने लगा।

रम्मू पुआल का बीडा खीचकर आराम से बैठ गया और ठिठुरे पैरो को आग के सामने कर दिया। फिर बोला-'दामूपुर के भीकू साव के जेठरा लडका है न ! बेचारा कर्जा काढ-के आज पहली लदान उठाया था, पर लेखा लइके जइसे बहेरे पाया, जेब कट गई।'

'हा राम, सच मा बडी बुरी गुजरी। पहिली लदान के घाटा मा कमर टूटि जाति है। ओकी तो गरदन ही कटि गै। भीकू खास जब से बैठक लिहेन, बेचारे बडी मुसीबत मा दिन बिताय रहे हैं।' -साव वास्तव मे दयार्द्र हो उठा था।

मौका माफिक जान, रम्मू ने असली बात पर आने की भूमिका बनाई-'काका, ऐसे दुरदिन मा अगर अपनी बिरादरी एकजुट्ट हुइके मदद पर उतर आये तो बोझ हल्काय जाय।'

हां, लेकिन बिरादरी वाले अइसे लायक हों तब न।' बूढे की बात मे अनुभव की झलक थी-'बिरादरी तो गिरे को औरो गिराती है।'

बेटे ने उमग भरे स्वर मे कहा- 'सबै नालायक नही है काका ! अब आजै मेरे सौ रुपये की मदद करने भरे मा दरजनो बनियों ने देखते-देखते उसकी भरपायी.....'

उसकी बात पूरी होते ही असर्फी खौलिया उठा- 'तूने सौ रुपिया दिया ! काहे दिखनौटी करने को उत्साह है, नालायक....'

रम्मू बाप का बदलता रंग देख, हक्का-बक्का रह गया।

□□

जनकराज पारीक

□

हरियल तोता

लड़का अपनी हवेली के दरवाजे मे बैठा मौज से जलेबी खा रहा था और भिखारिन सी दिखने वाली लड़की एकटक उसके दोने पर दृष्टि गड़ाये थी। लड़की के हाथ मे कपड़े से बना तोता देखकर लडका सहसा मचल उठा, 'मैं हरियल तोता लूंगा, मैं हरियल तोता लूंगा।' आवाज सुनकर लड़के के पिता आए। पूछताछ करने पर पता चला कि लड़की जलेबी तो लेना चाहती है पर बदले में अपना तोता नही देना चाहती। कुछ सोचकर लड़के के पिता बोले, 'देखो भई, जलेबी खाने के लिए तो केवल दांत मुंह और पेट काफी है लेकिन तोता रखने के लिए भीगी हुई दाल चाहिए, हरी मिर्चें चाहिए। तुम दोनों में से जो एक मुट्ठी दाल और पांच-सात हरी मिर्चें बाजार से ला सके वह तोता ले ले। जो न ला सके वह जलेबी खा ले।'

'लेकिन मेरे पास दाल और मिर्च के लिए पैसे नही हैं।' लड़की दीन स्वर मे बोली।

'पैसे इसके पास भी नही हैं।' पिता ने लडके की ओर इशारा करते हुए कहा, 'दोनो उधार लेकर आओ।'

प्रस्ताव पर सहमति प्रकट कर दोनो बजार की ओर चल दिए। लडकी के आश्चर्य का ठिकाना नही रहा जब उधार के नाम पर उसे तो किसी ने दुकान के चबूतरे पर पांव भी नही रखने दिया और लड़के के लिए गोदाम के दरवाजे खुल गये।

लिहाजा शर्त के अनुसार दोने मे बची हुई जलेबी की जूठन के बदले वह अपना हरियल तोता हारकर निरापद भ य मे अपने टापरे की ओर चल पड़ी।

□□

जगन्नाथ प्रसाद शर्मा

□

मनोबल

जैसे ही मैं गली में घुसा कुत्तों के लड़ने की आवाज सुनी। निकट पहुंचा तो देखा, चार-पांच कुत्तों ने एक मरियल कुत्ते को बुरी तरह दबोच रखा था। लोग-बाग बचकर निकल रहे थे। छुडाने का प्रयास किसी ने नहीं किया।

मैंने इधर-उधर देखा और एक सब्जी बेचने वाले का लट्ठ उठा। कुत्तों की पकड़ से उस गरीब कुत्ते को छुडाने लगा। अचानक दो कुत्तों ने मुझ पर आक्रमण बोल दिया। मैंने हिम्मत नहीं हारी और बराबर लट्ठ चलाता रहा। अब तो भीड़ से भी दो तीन लोग मेरी मदद को आ जुटे। आक्रमणकारी कुत्ते दुम दबाकर भाग गए।

यही भीड़ ने शाबाशी दी, 'आपने बड़ा अच्छा काम किया एक जानवर की जान बचाली।'

दूसरे दिन मैं अपने ढंग से गली में आगे बढ़ रहा था कि देखता हूं एक दुकान के सामने जोरदार झगड़ा हो रहा है। एक आदमी सड़क पर औंधा पड़ा खून से सना हुआ है। चार पांच गुण्डे घूंसा, लात और हॉकी स्टिक से उसे पीटे जा रहे हैं।

मुझसे रहा न गया। दहाड़ कर कहा, क्यों मारते हो इसे? छोड़ दो।

अचानक मैं चार गुण्डों की गिरफ्त में हो गया। खुले चाकू उनके हाथों में थे। मैंने चारों ओर भीड़ की सहायता पाने की दृष्टि से देखा किन्तु किसी की आंखों में वह चमक नहीं थी जो मैं चाहता था। तत्काल मुझे कल की घटना याद आ गयी। भीड़ उसका साथ देती है जो हिम्मत दिखाता है। मैंने आज भी मालिक का लट्ठ छीना और उन चारों पर टूट पड़ा।

□□

तारिक असलम 'तस्नीम'

□

सामूहिक यथार्थ

आसपास के इलाके को दंगाग्रस्त घोषित कर दिया गया। अपने-अपने घरों में दुबके-छिपे लोग खामोशी से सड़कों पर फौजी गाड़ियों, बूटों की खस्त-खर्कश एवं बन्दूक की जानलेवा आवाजें दम साधे सुनते रहे!

जिन घरों में रेडियो-ट्रांजिस्टर था, वे समाचार प्रसारण से स्थिति की जानकारी के लिए बेचैन थे। समाचार प्रसारण में जब यह कहा गया कि दंगाग्रस्त क्षेत्र पर सेना का पूरा नियन्त्रण है, आगजनी और लूटपाट की घटनाओं मे कमी हुई है, यथाशीघ्र स्थिति सामान्य होने की सम्भावना है, तब घरों में बन्द लोगो ने चैन की सांस ली। विचित्र कल्पनाओं शंकाओं से घिरे मन को शांति मिली।

किन्तु मोहन बाबू को तब बहुत गहरा आघात लगा, जब वह मित्रों, शुभचिन्तकों, सगे-सम्बन्धियों की खैर-खबर लेने घर से निकले। एक मित्र शरण के परिवार के बारे मे ज्ञात हुआ कि दंगाइयों ने उनका मकान लूट लिया और परिवारजनों की बेरहमी से हत्या कर दी। किसी तरह एक बच्चा कहीं कोने में लुकछुप कर बच गया था। वे उसे अपने घर ले आये। इस नये परिवार में उस मासूम बच्चे की जिन्दगी फलने-फूलने लगी। मोहन बाबू और उनकी पत्नी ने उसे अपने बच्चों के समान स्नेह-दुलार दिया। किन्तु उस बच्चे की सवालिया निगाहें और चेहरे की उदासी कम न हुई। वह जागती आंखों के सामने डरावने सपने की तरह कुछ महसूस करता और गुमसुम हो जाता।

एक दिन जबकि वह परिवार के दूसरे बच्चों के साथ पार्क से खेलकर अच्छे मूड में घर लौटा था, मोहन बाबू की पत्नी ने कुछ सोचकर पास बिठाते हुए पूछा— 'अच्छा यह बताओ बेटे! तुम एकाएक उदास क्यों हो जाते हो? बोलो?'

—'मम्मी! मैं सोचता हूं! अगर कभी गुण्डों-बदमाशों ने आपको भी मार दिया तो फिर मैं कहां जाऊंगा?'

यह सुनकर तो सन्न हो गए सब! मासूमियत भरा जवाब था उसका।

□□

अचानक एक सन्नाटा पसर गया। पत्नी के खाना खाते हाथ जहां के तहां थम गये। बच्चे खाना खा रहे हैं...... चुपचाप...... जल्दी...... जल्दी।

□□

प्रकाश तातेड़

□

मितव्ययता

एक अधेड़ महिला अपनी तीन पुत्रियों के साथ एक रेडीमेड स्टोर में घुसी। काफी देखभाल कर उसने ज्येष्ठ पुत्री के लिए फ्रॉक खरीदी। शेष दो के लिए कुछ भी नहीं।

दुकानदार भी फुरसत में था। बोला, 'तीन बेटियों के लिए सिर्फ एक ही फ्रॉक?'

महिला ने कहा, 'क्या मुश्किल है! बड़ी पहनेगी तो फ्रॉक, मंझली पहनेगी तो मिडी और छोटी पहनेगी तो मेक्सी बन जायगी।'

□

अन्तर

आज से पांच वर्ष पूर्व जेठाराम अपने बेटे बालूराम को शहर पढ़ाने लाया था। रास्ते में ही मुझे मिला गया। देखा, गांव की माटी का फूल बालूराम, एक हाथ में बड़ा थैला, दूसरे में गुदड़ी में लिपटा बिस्तर लिए खड़ा था। पिता जेठाराम के हाथ रोटियों की पोटली थी।

आज बालूराम बी.ए. की परीक्षा देकर गांव जा रहा है। उसके हाथ में छोटा सा बेग है। उसकी बड़ी अटेची व बेडिंग को पिता जेठाराम ने उठा रखा है। उसका पुत्र बी.ए. जो होने वाला है।

□□

प्रमोद कुमार 'बेअसर'

□

लेखाजोखा

आकाश मण्डल में घने बादलों का एक टुकड़ा आ जाने के कारण अचानक ही मूसलाधार वर्षा होने लगी। वर्षा से बचने के लिए उसने खुद को तो एक घने पेड़ की छाया के नीचे छुपा लिया पर साइकिल व उसके केरियर पर लगी ढेरों फाईलों के बण्डल को सड़क के किनारे ही लावारिश लाश सा छोड़ दिया।

पेड़ के नीचे ही खड़े एक सज्जन से देखा न गया। अतः सलाह दे डाली कि साइकिल को भी पेड़ की छाया के नीचे कर ले ताकि फाईलों का वह ढेर भीगने से बच जाए।

पहले तो बड़ी ही तीखी निगाहों से उसने उस वृद्ध सज्जन को देखा, फिर कहने लगा.... 'बाबूजी, फाईलों के एक दफ्तर से दूसरे दफ्तर तक पहुंचाने का ही भत्ता मुझे मिलता है, न कि भीगने-से बचाने का.... अगर भीग रही है तो भीगे ... भला इसमें मेरी क्या जिम्मेदारी.... ।'

कहकर उसने बड़े इत्मीनान से वर्दी की ऊपरी जेब में बीड़ी निकाल कर सुलगाली। इधर वह सज्जन विभिन्न कार्यालयों की कार्यपद्धतियों में बरती जाने वाली, ऐसी अनेकों लापरवाहियों का लेखाजोखा करते हुए पानी बन्द होने का इन्तजार करने लगा।

□□

पृथ्वीराज अरोड़ा

□

यही सच है

'सर!' ड्राईवर ने दरवाज़े का थोड़ा सा हिस्सा खोलकर आवाज़ दी।

हाथ का जाम एक ओर रखकर साहब खुश होकर बोले, तुम आ गये गुरमीत....आओ, आओ फिर उसकर देखा और [illegible], कुछ कमजिन।

अचानक एक सन्नाटा पसर गया। पत्नी के खाना खाते हाथ वहां के वहां थम गये। बच्चे खाना खा रहे हैं.... चुपचाप.... जल्दी.... जल्दी।

□□

प्रकाश तातेड़

□

मितव्ययता

एक अधेड़ महिला अपनी तीन पुत्रियों के साथ एक रेडीमेड स्टोर में घुसी। क को देखभाल कर उसने ज्येष्ठ पुत्री के लिए फ्रॉक खरीदी। शेष दो के लिए कुछ भी नहीं।

दुकानदार भी फुरसत में था। बोला, 'तीन बेटियों के लिए सिर्फ एक ही फ्रॉक?'

महिला ने कहा, 'क्या मुश्किल है! बड़ी पहनेगी तो फ्रॉक, मंझली पहनेगी तो मिडी और छोटी पहनेगी तो मैक्सी बन जायगी।'

□

अन्तर

आज से पांच वर्ष पूर्व जेठाराम अपने बेटे बानूराम को शहर पढ़ाने लाया था। रास्ते में ही मुझे मिल गया। देखा, गांव की माटी का फूल बानूराम, एक हाथ में बड़ा थैला, दूसरे में गुदड़ी में लिपटा बिस्तर लिए खड़ा था। पिता जेठाराम के हाथ रोटियों की पोटली थी।

आज बानूराम बी.ए. की परीक्षा देकर गांव जा रहा है। उसके हाथ में छोटा सा बैग है। उसकी बड़ी अटैची व बेडिंग को पिता जेठाराम ने उठा रखा है। उसका पुत्र बी.ए. जो होने वाला है।

□□

प्रमोद कुमार 'बेसबर'

□

लेखाजोखा

आकाश मण्डल में घने बादलों का एक टुकड़ा आ जाने के कारण अचानक ही मूसलाधार वर्षा होने लगी। वर्षा से बचने के लिए उसने खुद को तो एक घने पेड़ की छाया के नीचे छुपा लिया पर साइकिल व उसके केरियर पर लगी ढेरों फाईलों के बण्डल को सड़क के किनारे ही लावारिश लाश सा छोड़ दिया।

पेड़ के नीचे ही खड़े एक सज्जन से देखा न गया। अतः सलाह दे डाली कि साइकिल को भी पेड़ की छाया के नीचे कर ले ताकि फाईलो का वह ढेर भीगने से बच जाए।

पहले तो बड़ी ही तीखी निगाहों से उसने उस वृद्ध सज्जन को देखा, फिर कहने लगा''''बाबूजी, फाईलों के एक दफ्तर से दूसरे दफ्तर तक पहुंचाने का ही भत्ता मुझे मिलता है, न कि भीगने-से बचाने का'''' अगर भीग रही है तो भीगे''' भला इसमें मेरी क्या जिम्मेदारी''''।'

कहकर उसने बड़े इत्मीनान से वर्दी की ऊपरी जेब से बीड़ी निकाल कर सुलगाली। इधर वह सज्जन विभिन्न कार्यालयों की कार्यपद्धतियों में बरती जाने वाली, ऐसी अनेकों लापरवाहियों का लेखाजोखा करते हुए पानी बन्द होने का इन्तजार करने लगा।

□□

पृथ्वीराज अरोड़ा

□

यही सच है

'सर!' ड्राईवर ने दरवाजे का थोड़ा सा हिस्सा खोलकर आवाज दी।

हाथ का जाम एक ओर रखकर साहब खुश होकर बोले, तुम आ गये प्रमोद''''आओ, आओ फिर उघरकर देखा और प्रश्न उछाला, एक कमसिन।

'सर ! उसका आज इंतजाम नहीं हो सका । मैंने कोशिश'''''

साहब की नसें तन गयी । कुछ सोचकर अपने भावों को छुपाते हुए बोले, चलो छोड़ो, आओ सिट हियर । उन्होंने कुर्सी की ओर इशारा किया ।

गुरमीत झिझकता हुआ साथवाली कुर्सी पर बैठ गया । साहब ने एक जाम बनाकर उसकी ओर बढ़ा दिया, लो पीओ ।' वह साहब की ओर देखता ही रह गया, उसे उनका आज का व्यवहार अजीब-सा लगा । उसने जाम को पकड़ा नहीं।

साहब प्यार से बोले, 'अरे लो न यार।'

अब उससे इनकार करते न बना और जाम लेकर पी गया । चौथा जाम बनाते हुए साहब ने कहा, गुरमीत, सचमुच मैं तुमसे बहुत खुश हूं । जल्दी ही तुम्हारी तनखा बढ़ाने को सोच रहा हूं क्योंकि हमारे लिए हर रोज नयी कमसिन ढूंढने मे तुम्हें दिक्कत तो बहुत होती होगी''''' हैं ?'

शराब गुरमीत पर असर करने लगी थी, 'होती तो है सर, पर अपने साहब को खुश करने लिए मैं सब कुछ कर सकता हूं।

'गुड, शाबाश !' कहते हुए साहब ने उसे गले लगा लिया फिर गंभीर होकर बोले, आज मैं बहुत उदास हूं गुरमीत वैरी डिस्टर्बड् ।'

'सर मैंने बहुत कोशिश की । मुझे अफसोस है साहब कि'''''

'परन्तु आज की रात मुझे नींद नहीं आयेगी । डु समथिंग । कुछ तो करो।

'मैं क्या करूं ?''''' क्या कर सकता हूं ?'

'तुम एक काम करो' ।

'बोलो साहब, बंदा हाजिर है ।'

'आज की रात तुम अपनी बीवी को भेज दो ।'

गुरमीत के सामने असख्य बिजलियां कौंधने लगीं । वह बद-हवास-सा साहब की ओर लपका और उसके गाल पर एक भरपूर चांटा रसीद कर दिया । फिर गालियां बकता हुआ''''' कमरे से बाहर हो गया !

□

अभाव

'सुनो !'

,हूं ।'

'देखो, यह बच्चा कितना सुन्दर है !'

'हां ।'

पति को छूते हुए पत्नी आगे बोली, 'इसके हाथ-पांव नाक सिर, आंखें-सब तुम्हारे जैसी हैं ।'

पति कुछ क्षण कैलेंडर को घूरता रहा । फिर मुंह घुमा कर पत्नी को देखते हुए मुस्कराकर बोला, 'और होंठ तुम्हारे जैसे हैं, हैं न ?'

पत्नी पति के साथ और भी सटकर बोली, 'ऐसा बच्चा हमारे घर कब आयेगा ?'

पति एकदम उठ बैठा । पत्नी ने हाथ बढ़ाकर उसे फिर लिटा लिया, 'अब क्या है ? अब तो तुम्हें नौकरी मिल गयी है' ।

'पति रूआंसा होकर बोला, 'कहां मिली है ?'

इन्टरव्यू से लौटकर तो कहा था कि मिल गयी है ।'

,झूठ बोला था ।'

'क्यों ?'

'जानकर तुम्हें दुःख होगा कि नहीं मिली, इसलिये ।'

'इस बार क्या हुआ ?'

'वही–सिफारिशियों ने रास्ता रोक लिया ।'

'फिर''' ?' पत्नी ने पति की आंखों में झांका ।

'थोड़ा और इन्तजार करो ।'

वह दयनीय हो उठी, 'और नहीं मनी''''और नहीं' ।

'संगीता ।' उसका मन भर आया ।

'मनीष, अब और इन्तजार नहीं हो सकता । मुझे मां बना दो मनीष''''मां !'

'थोड़ा सब्र करो संगीता' । मनीष उसके सिर पर हाथ फेरते हुए बोला । 'स्त्री के मन में मां बनने की ललक कैसी होती है, तुम नहीं समझ सकोगे' ।''''

और तुमने तो यह बताया था कि''''

'क्या बताया था ?'

'कि जब तुम पैदा हुए थे, तुम्हारे डैडी भी बेकार थे' ।

'हां ।'

'क्या तुम पले नहीं?'

'जिन अभावों में मां-बाप ने पाला था, जब सुनाते हैं तो ''''

''''तो क्या ?'

''''तो रो देते हैं 'संगीता'''' रो देते हैं । कहा करते हैं कि भूख के सामने सब अभाव बौने हैं'''' मद्य'''' ।'

□□

पारस दासोत

□

झण्डारोहण के बाद

झण्डा फहराने के लिये''''
नेताओं ने डोरी खींची ।
फूलों ने ऊपर से गिरकर'''' उनका स्वागत किया ।
अब''''
नेताओं का भाषण समाप्त होते ही''''
फूल'''' पैरों'''' तले'''' कुचले चले आ रहे थे ।

□□

पुष्कर द्विवेदी

□

मुहूर्त

मकान बनकर तैयार। उस पर सीमेन्ट का प्लास्टर भी चढ़ा।

तभी रात को पानी बरसा और बरसता रहा हफ्ते भर।

बारिश थमी। मकान-मालिक ने प्रसन्न होकर अपनी पत्नी से कहा-'कितने अच्छे मुहूर्त मे मकान तैयार हुआ। पानी भी 'तराई' के लिए नहीं डालना पड़ा। इस बारिश में तो मकान पत्थर-सा मजबूत हो गया है।'

इतना कहकर गृहस्वामी नये मजबूत मकान में प्रवेश हेतु मुहूर्त ढूंढ़ने लगा।

उसी समय-

इधर भी एक रिक्शेवाले ने कच्ची मिट्टी की दीवार खड़ी कर उस पर छप्पर डाला था। एक हफ्ते की बारिश जब थमी तो वह पत्नी से दुःखी होकर बोला-'जाने किस कुघड़ी में दीवार खड़ी कर छप्पर छाया कि सब मिट्टी इस बारिश में बह गयी। छप्पर नीचे आ गया-गिरकर।'

फिर वह अपनी पत्नी के साथ-साथ एक वीरान पड़े खंडहर के बरामदे में अपना सामान बिना किसी मुहूर्त के ले जाने लगा।

□

परिवर्तन

वह जब भी मिलता, तभी कहता-मेरी रचनाएं इस पत्रिका मे छप रही हैं.... मेरी कहानी उस पत्रिका मे प्रकाशित होती है।

कभी-कभी, वह प्रसन्नता मे दोहरा हो जाता और खिलकर बताता-अब तुम मुझे आकाशवाणी से सुनोगे। टी.वी. पर मेरी कहानी पर वीडियो बनने को है।

चार वर्ष हुए। वह शहर में दिखाई नहीं दिया। एक-दो बार देखा तो भागा-भागा सा नजर आया। पर एक दिन वह मुझसे टकराते-टकराते बचा। अरे तुम! कहां हो भई? आजकल 'रचनात्मक कार्य' कुछ अधिक ही हो गया है क्या?

मैंने उसे टोककर रोक लिया।

वह झुंझला उठा। पिटा हुआ-सा मुंह बनाकर बोला—मेरी कोई रचना अब कहीं नहीं आ रही है।""मेरी कोई कहानी पर अब तालियाँ नहीं बजेंगी।

अरे! मैं चौंक पड़ा—भई क्यों? ऐसा क्यों?

उसके अन्दर हुए इस आकस्मिक परिवर्तन और साहित्य के प्रति उपेक्षाभाव देखकर मुझे आश्चर्य हुआ। मेरे अन्दर मन में जिज्ञासा और कौतूहल का सागर फैल गया।

मैंने मुस्कराकर सहज होकर पूछा—भला ऐसी क्या बात हो गई? साहित्य से विमुखता क्यों? तुम तो साहित्य के प्रति समर्पित हुए से थे।

इस बीच वह कई बार अपनी कलाई पर दृष्टि डाल चुका था। उसकी कलाई पर एक खूबसूरत घड़ी चमचमा रही थी। तभी उसका पूरा वजूद मेरी आंखों में टिनोपाली सफेद-सा झकझका गया।

वह कुछ सहज व सामान्य हुआ। उसने मेरे कौतूहल भरे प्रश्न को तसल्ली से ग्रहण किया। फिर अपनी कलाई घड़ी पर नजर डाली और मुझे उत्तर देता हुआ चलता बना— यार, तब मैं बेकार था, पर अब मैं एक बैंक कर्मचारी हूं""।

मैं काफी देर तक उसकी बात और उसके उत्तर को सुनकर खड़ा रहा। उसके अन्दर हुए परिवर्तन पर गहराई से सोचता रहा। और सोचता रहा कि जीवन में 'अर्थ' वास्तव में कितना अर्थपूर्ण परिवर्तन ले आता है।

□□

पुष्पलता कश्यप

दीक्षा

राजनीतिक दीक्षा की समाप्ति पर गुरु ने अपने शिष्यों की परीक्षा लेने की ठानी।

'तुम्हें क्या 'स्कोप' दिखता है, वत्स'– एक से पूछा।

'जनहित, गुरुदेव' शिष्य ने प्रत्युत्तर दिया।

'तुम तो बिल्कुल कोरे ही रह गये'– गुरु के चेहरे पर निराशा दिखाई दी।

'और तुम्हें, वत्स ?'–प्रश्न को दूसरे की ओर उछाला गया।

'पार्टी-हित, गुरुदेव' प्रत्युत्तर था।

'तुम्हें अभी बहुत-कुछ सीखना है'– गुरुदेव का मंतव्य था।

'और, तुम्हें ?' प्रश्न तीसरे के सामने था।

'निजी-हित, आचार्य।' प्रत्युत्तर रहा।

'सच्चाई के बहुत करीब पहुंच गये हो। फिर भी तुम्हारी शिक्षा अभी अपूर्ण है'– गुरु ने कहा।

अब गुरुदेव अपने उस चहेते और होनहार शिष्य की ओर मुखातिब हुए जिसके प्रति वह बहुत आशावान थे। स्नेहासिक्त स्वर में पूछा–

'क्यों वत्स, तुम्हें क्या दिखता है ? जनहित ?'

'नहीं, गुरुदेव।'

'तो पार्टी-हित ?'

'नहीं।'

'तो निजी स्वार्थ की साध !'

'यह भी नहीं।'

'तो क्या देख रहे हो ?' गुरु की उत्कट उत्सुकता मुखरित हो उठी।

'सिर्फ कुर्सी, गुरुदेव। इसके सिवा मुझे कुछ भी दिखाई नहीं पड़ रहा।'

'धन्य हो वत्स !'— गुरुदेव उछल पड़े— 'तुम लक्ष्य को पहचानते हो। मेरा श्रम सार्थक हुआ। तुम-सा शिष्य पाकर मैं गौरवान्वित हूं'— गुरु गद्‌गद् हो गये और आगे बढ़कर अपने होनहार शिष्य को गले से लगा लिया।

□□

प्रेम गुप्ता "मानी"

□

स्वादहीन

सुबह, नींद की खुमारी पूरी तरह टूटने भी न पाई थी कि उसे पत्नी की झल्लाहट भरी रोनी आवाज सुनाई दी, 'इनको तो सोने से ही फुर्सत नहीं है''''मैं अकेली नौकरानी की तरह सारे दिन खटती-मरती रहती हूं पर जरा सी दया भी आए इन्हें''''सुबह उठकर जरा सा हाथ बटा दें तो कितना आराम मिल जाए''''अरे, एक मिया जी हैं, कितना काम करते हैं पत्नी का। और ये''''' पत्नी की बात सुन उसे लगा कि वास्तव में उसका गुस्सा होना स्वाभाविक है। सारा दिन काम करते थक जाती है''''सच में अगर वह थोड़ा साथ दे दे''''।

उस दिन उसने कुछ नहीं किया पर दूसरे दिन पत्नी व बच्चों के जागने से पहले ही उठ गया''''मंजन वगैरह किया और रसोई में घुस गया। सबसे पहले गैस जलाकर दूध उबाला, डबलरोटी रोस्ट किया और फिर दो प्याला चाय बनाकर बाहर आ गया।

पत्नी को खुश करने के इरादे से उसने उसका गाल थपथपा कर बड़े प्यार से जगाया और चाय का प्याला उसके हाथ में थमा दिया। हाथ में चाय का प्याला आते ही पत्नी कुछ चौंकी और फिर तुरन्त रसोई में गयी। पर थोड़ी देर बाद ही क्रोध से फुफकारती उसके समाने खड़ी थी, 'कर दिया न सत्यानाश चौके का..... सारा सामान फैला कर रख दिया.....मरे मैं क्या मर गयी थी जो सुबह-सुबह चौके में घुस गए.....।'

पत्नी की क्रोधभरी बात सुन सहसा उसे प्याले में पड़ी चाय बेहद स्वादहीन लगने लगी।

□□

प्रेमसिंह बरनालवी

□

नामकरण

सड़क का नाम सुन वह चौंक गया। एक राहगीर ने, जो उस ऐतिहासिक घटना का प्रत्यक्षदर्शी था, जो घटना सुनाई वह इस प्रकार है:-

एक समूह के नेता ने कहा—यह सड़क राम दरबार जाती है इसलिए इसका नाम राम दरबार मार्ग होना चाहिए।

दूसरे समूह का नेता—पीर सुलेमान की दरगाह इसी सड़क पर पड़ती है इसलिए इसका नाम सुलेमान राह होना चाहिए।

तीसरा—इस सड़क की शोभा, सिंह सभा गुरुद्वारे के कारण है। इस लिए इसका नाम सिंह सभा सड़क होना चाहिए।

चौथा—जिम्रान पीटर मसीह को अंग्रेजों ने इसी सड़क पर शहीद किया था इसलिए इसका नाम जिम्रान पीटर या पीटर मसीह रोड होना चाहिए।

बात काफी बढ़ गई। एक सड़क के चार नाम तो हो नहीं सकते थे। नेताओं ने भी इसे प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया। आखिर समस्या का तर्क संगत हल यह सोचा गया कि ऐसा नाम रखा जायेगा जिसमें सबके नाम के

अंश आ जाए। फिर जब पहल का सवाल उठा तो इसे लाटरी द्वारा तय किया गया जिसे सब पक्षों को मानना था।

'सुलेमान रामसिंह पीटर पथ।' चार भाषाओं में लिखे इस नाम को पढ़कर वह सोचने लगा काश एक नाम की तरह दिल भी एक हो जाते और दिल की सिर्फ एक ही भाषा होती है जिसमें शब्द नहीं होते।

□

सूरत-आईना

मि. क अब सत्ता में आ गये हैं। कल वे वोट के लिए घूहड़माजरी में कल्लू चमार को तीस डिग्री के कोण से 'राम-राम चाचाजी व कुबड़ी कहारिन को 'ताई जी पाए लागूं' कह रहे थे। अब वे सातवें आसमान में पींघे झूल रहे हैं–आम आदमी की पहुंच से दूर, उससे जुदा तत्व के प्राणी। लीजिए तसवीर और आईना आमने सामने है:–

कल बिजली बोर्ड के कैशीयर से उग्रवादी सवा लाख लूटकर फरार। बहुजन पार्टी के जिला प्रधान को गोली मार कर हत्या।""सूर्य नगर में बिजली ईद का चांद और अंधेरे की आड़ में समाज विरोधी तत्वों की चांदी""

मंत्री जी का बयान"" छुटपुट घटनाओं को छोड़कर जो अक्सर यूं भी होती रहती हैं, कानून और व्यवस्था की स्थिति पूर्ण नियन्त्रण में है और निरन्तर सुधार हो रहा है।

घी, मिट्टी का तेल, डीजल, सीमेंट, चीनी व अन्य चीजों के भावों में जबरदस्त तेजी। कालाबाजारियों के पौबारह""

आंकड़े कहते हैं मूल्यों में भारी गिरावट आई है। जरूरत की चीजें डिपो से सस्ते दामों पर उपलब्ध कराई जा रही हैं। जमाखोरी रोकने व समाज विरोधी तत्वों से निपटने के लिए विशेष सेल बनाये गये हैं।

अशान्ति के कारण औद्योगिक उत्पादन में भारी कमी। बजट का

औद्योगिक उत्पादन में अशान्ति के बावजूद दो प्रतिशत वृद्धि। विज्ञान

उचित मूल्य न मिलने से निराश किसान लाचार होकर उत्पादन कम करने व रोष स्वरूप अनाज जलाने लगे।

....

आदि

को दस करोड़ रुपये बोनस के रूप में दिये गये।

....

इत्यादि

क अब सत्ता से बाहर हो गये हैं। वही सूरत है, वही आईना भी। अन्तर है तो केवल इतना कि वे अब खुद आईने की जगह खड़े हो गये हैं। वे आदमी नहीं आईना बन गये हैं। ऐसा आईना जिसमे धुंधली चीजें भी जरूरत से ज्यादा साफ नजर आती हैं और वे चाहते हैं हर कोई उस आईने से झांके।

□□

बलराम अग्रवाल

□

उम्मीद

रिक्शे वाले को पैसे चुकाकर मैंने ससुराल की देहरी पर पांव रखा ही था कि रमा की मम्मी और बाबूजी मेरी अगवानी के लिए सामने वाले कमरे से निकलकर आंगन तक आ पहुंचे।

'नमस्ते मांजी, नमस्ते बाबूजी।'

'जीते रहो।' बाबूजी ने हाथ उठाकर मुझे आशीर्वाद दिया लेकिन मांजी ने झपट कर मेरे हाथ से ब्रीफकेस ले लिया और उसी सामने वाले कमरे के किसी कोने में उसे रख आई।

'मैं कहूं थी न-पन्द्रह पैसे की एक चिट्ठी पर ही दौड़े चले आवेंगे।' ड्राईंग रूम बना रखे उस दूसरे कमरे में हम पहुंचे ही थे कि वह बाबूजी के सामने पहुंचकर बोली- दुश्मन को भी भगवान ऐसा ही दामाद दे।'

□

मेह बरसे तो नेह बरसे

'सासरे से आए कै दिन हो गए हैं ?' भूरी ने पोनी से पूछा।

'दिन का क्या पूछो, पूरे दो महीने निकल गये हैं।' पोनी ने भारी मन से निःश्वास छोड़ते हुए कहा।

'कोई लिवाने नहीं आया ? बेनोजी नाराज हैं क्या ?' उसने चिकोटी लेनी चाही।

'वो क्या नाराज होंगे! नाराज तो भगवान हो गया है।' कहते-कहते पोनी का चेहरा गम्भीर हो गया। चाल धीमी पड़ गई। वे उस रेले के साथ जा रही थी जो सिर पर तगारी रखे, कांधे पर कुदाल थामे, सरकार के खोले 'फेमिन' पर जा रहा था। बांध की पार पर मिट्टी डालकर उसकी चौड़ाई और ऊंचाई बढ़ानी थी। यही फेमिन का काम था। आसपास के गांवों से मजदूरों का रेला उमड़ पड़ा था। ठेकेदारों की टुकें और अफसरों की जीपें दौड़ रही थी। रेगिस्तान में नखलिस्तान था, यह इलाका।

'पीहर में कब तक कटेगी ?' कुछ देर चुप रहने के बाद भूरी ने चिंतित स्वर में पूछा, 'भाई-भावज कब तक ओटेंगे !'

वह हंसदी फीकी-दार्शनिक हंसी।

'सासरे वालों ने पीहर भेजदी बाप के माथे। पण म्हूनें कोई। मैं कौणसी किसी के माथे हूं। म्हने तो अठेई काम करणो, ने बठेई काम करणो।'

'सो तो ठीक है पण.....' भूरी कुछ कहना चाहती थी मगर उसे शब्द नहीं मिल रहे थे। पोनी अपने में ही जैसे खो गई। सोचने लगी—जरा-सा काल क्या पड़ा मनख री मीत फिर गई। पण मनख बापड़ो कांई करैं। जद भगवान करम नै ऐंठ्यो तो मनख रो कांई बिसात।'

पोनी साल-दर-साल काल (अकाल) भुगतते-भुगतते काफी समझदार हो गई है। अब वह अपने भाग को नहीं कोसती। न दूसरों को दोष देती है। केवल

बरसात का पानी ही जीवन का संचार कर सकता है, मेह की बूंदें ही जीवन में बुलबुले बनकर फूटेंगी। वह सोचती है– अब तो मेह बरसे तो सगा-संबंध फल फूल सकें। मेह की ठंडी फुहार मन में नेह बरसा सकें। नहीं तो तीजरा झूला न्है गणगोर फीकी पड़ जावेला।'

'क्या सोच रही है।' भूरी बोली 'जल्दी-जल्दी चल। हम बहुत पीछे रह गई हैं। देर हुई तो वो हरामी मेट फिर अपने गंदे दांत दिखायेगा।'

और वे तेजी से कदम आगे बढ़ाने लगी।

□□

मदन अरोड़ा

□

धरम की भीख

अब जाकर कहीं उसका व्यवसाय जमा है। इस शहर में जब वह नया आया था तो एक वक्त की बासी रोटी भी नसीब नहीं हो पाती थी। हर घर, हर मोहल्ले मे वह ईश्वर के नाम पर भीख मांगा करता था। लोग उसे दुत्कार देते थे। कभी-कभार ही कोई रोटी अथवा पांच-दस पैसे थमाता था।

वक्त ने उसे बहुत कुछ सिखा दिया। अब उसे हर घर के बारे में जानकारी है। उसे पता है कि किस घर में मुसलमान रहता है, किस घर में हिन्दू। अब वह सिक्ख के घर के आगे वाहेगुरु के नाम पर, हिन्दू के घर के आगे भगवान के नाम पर और मुसलमान के घर के आगे खुदा के नाम पर भीख मांगता है।

अब उसे पर्याप्त भीख मिल जाती है।

□□

मधु

□

उस पार

मैं क्या करता ? निमिषा इतनी नजदीक तो सोयी हुई थी । इस पलंग पर मैं और उस पर वह ।

बाहर गर्जन-तर्जन, बरसात और तेज हवाएं । मेरे भीतर भी वही कुछ । लेकिन वह थी कि बोले जा रही थी । दुनिया भर की बातें । घर बीती । पर बीती । निश्छल ऐसे कि पास सोया प्राणी मर्द न होकर उसकी अपनी कोई सहेली हो ।

उसके शब्द मेरे जिस्म पर रेंग रहे थे, सांसों की खुशबू मेरे मन पर थपकी दे रही थीं । वह क्या कह रही थी, मुझे पता नहीं । मैं तो बस हां हूं कर रहा था और खोया-खोया उसे निरख रहा था । लग रहा था जैसे मैं अपना आपा खो रहा हूं ।

एकाएक मैंने उसे समेट लिया और चूम बैठा ।

'उंह ना, ना । छोड़ो । यह क्या कर रहे हो !'

वह छूट कर पलंग के दूसरे किनारे सो गयी । मेरी ओर पीठ किये । खामोश । निःशब्द । जैसे उफनती नदी को किसी ने मंत्रबिद्ध कर दिया हो । एकदम जड़ ।

फिर धीरे-धीरे हिचकियां सुनायी दीं । हल्की रुलाई । अस्फुट शब्द, 'तुमने मुझे क्या इसीलिए रोका था ?....विश्वास....दुनिया के सारे मर्द....मुझे गलत क्यों समझा ?....।'

मेरे जिस्म पर अंगार बरसने लगे । मैं यह क्या कर बैठा ! मेरा कितना सम्मान करती थी वह दुखनी ! कितना विश्वास ! और मैं....!'

वह रोते-रोते सो गयी । मैं पछतावे में न जाने कितनी देर करवटें बदलता रहा ।

सुबह मेरी नींद खुली तो वह जाने को तैयार बैठी थी।

'बस का टाइम हो रहा है।' वह बोली, उदास आवाज में।

मैं हड़बड़ा कर उठा। मुंह धोया। कपड़े बदले। फिर पास जाकर उसकी आंखों में झांका।

'निम्मी, मुझे माफ कर दो निम्मी। दरअसल मैं अपने आप पर काबू नहीं रख सका।' मेरी आवाज में कम्पन था।

और यह क्या ! डांटने-डपटने, या कोई शिकवा-शिकायत करने के बजाय वह तो मुझसे लिपट गयी और मेरे होंठ चूम लिये।

मैं कुछ समझ ही नहीं पाया। कई देर तक सम्मोहित सा खड़ा रहा। होश आया तब तक निम्मी जा चुकी थी।

□□

मधु अरड़िया

□

अदब

साहब ने आदेश दिया-अपने अतिरिक्त समय में वह साहब के नन्हें के साथ खेले।

नन्हें के साथ खेलते-खेलते उसे अनायास ही गांव में अकेले रहते अपने बच्चों की याद आ जाती और वह साहब के नन्हें को कसकर छाती से लगाकर चूम लेता।

साहब ने एकबार उसे ऐसा करते देख लिया और सख्त हिदायत दी कि वह सिर्फ खेले, नन्हें को चूमे नहीं।

अब वह मालिक के समान ही, नन्हें का भी अदब करता है-खेलते वक्त भी दृष्टि नीचे रखता है।

□

समानता

पति-पत्नी दोनों ही बड़ी व्यग्रता से प्रतीक्षा कर रहे थे। किसी विशिष्ट मेहमान के आने की बात थी जिसके स्वागतार्थ भांति-भांति के पकवान बनाए गए थे।

पत्नी बच्चों से कह रही थी, 'बस थोड़ी देर और ठहर जाओ बच्चों अब मेहमान आने ही वाले हैं फिर सबका खाना, साथ ही लगा दूंगी।

""और यही बात नीचे बसे भिखारी की पत्नी अपने भूख से बिलबिलाते बच्चों को कह रही थी। ""बस थोड़ी देर और ठहर जाओ"" अब जूठन गिरने ही वाली है""फिर हम सब मिलकर खा लेंगे।

□□

मधुसूदन पाण्ड्या

□

दृष्टिकोण

आज दादाजी अस्सी वर्ष के हो गये हैं। उन्होंने बीस साल पहले ही अपनी हवेली व सम्पत्ति दोनों बेटों में बांट दी थी। अपने पास उतना ही रखा जिससे वे अपनी जरूरतें पूरी कर सकें। वे किसी पर बोझ नहीं बनना चाहते थे।

'अरे बेटा सुरेश, जरा इधर आना तो।' उन्होंने अपने बड़े पोते को आवाज दी।

'आया दादाजी।' सुरेश पलक झपकते आ पहुंचा।

'जरा गाय का तीन किलो शुद्ध घी तो ला दे।' दादाजी ने कहने के साथ ही बर्तन और सौ रुपये का नोट पोते को थमा दिया।

लेकिन पोते ने पैसा लेने से मना करते हुए कहा, 'दादाजी, आपकी इतनी सी सेवा हम कर दें तो क्या फर्क पड़ता है? आपके ही आशीर्वाद से तो हम इस काबिल हुए हैं।'

दादाजी सुरेश की पीठ पर हाथ फेरते हुए बोले, 'बेटे, जब तक मैं समर्थ हूं, तुम लोगों का खर्च क्यों करवाऊं? तुम्हें रुपये के बदले केवल पच्चीस पैसे ही मिले, इस तरह से तुम्हारा नुकसान करना हम बूढ़ों का इष्ट नहीं है।'

पोते ने आश्चर्य से पूछा, 'दादाजी, इसमें नुकसान किस बात का?'

पोते को पास पड़े तख्त पर बिठाते हुए दादाजी समझाने लगे, 'देखो, अगर तुमसे घी के रुपये नहीं लिये तो मेरे सौ रुपये बच जाएंगे। मेरे मरने के

बाद यही रुपये आधे-आधे तुम्हारे पिता व चाचा में बटेंगे। फिर तुम्हारे पिता के हिस्से के पचास रुपये तुम में और तुम्हारे छोटे भाई में बटेंगे। इस तरह तुम्हें केवल पच्चीस रुपये ही मिलेंगे जबकि तुम अभी पूरे सौ रुपये खर्च कर रहे हो। सो बेटे, ये घाटे का सौदा है। मेरी सामर्थ्य के अनुसार तुम्हें देना मेरा कर्त्तव्य है। जिस दिन मैं इस योग्य नही रहूंगा उस दिन तुम लोगो से अवश्य मांग लूंगा।' यह कह उन्होने पोते की हथेली पर रुपये रख हथेली बन्द कर दी।

□□

महेन्द्र कुमार ठाकुर

□

इज्जत

एक गांव की बात है। डाकुओ ने एक घर मे पनाह ली। उस गांव की पुलिस बड़ी मुस्तैद थी। तुरंत ही सादी वर्दी मे उस घर को घेर लिया गया। एक पुलिस वाले ने दरवाजे पर दस्तक दी। गृहस्वामिनी बाहर निकली। 'कौन हैं आप ? क्या चाहते हैं ?' पुलिस वाला बोला, 'मैं गांव का थानेदार हूं। सुना है तुम्हारे घर मे डाकू घुस आये हैं। अतः पूरे दल-बल के साथ उन्हें गिरफ्तार करने आया हूं। कहां हैं डाकू जल्दी बताओ ?'

इतना सुनते ही महिला दौड़ी-दौड़ी भय से कांपती हुई डाकुओ के कमरे में गई व एक डाकू के पैरों मे गिरकर गिड़गिड़ाने लगी– 'डाकू भैया-डाकू भैया मेरी इज्जत बचा लो, घर मे पुलिस वाले घुस आये हैं।'

□□

महेन्द्रसिंह महलान

□

हाफ माइंड

नये थानेदार की एस पी के यहां पेशी पर पेशी पड़ रही थी। इस पर भी जब उसका दिमाग ठीक नहीं हुआ, तब तबादलों का दौर शुरू हो गया। बीबी बच्चों के साथ सामान उठते वह एक शहर से दूसरे शहर ठोकरें खाने लगा। और इसी क्रम में एक दिन उसके हाथ में सस्पेंशन ऑर्डर थमा दिये गये।

लगातार पड़ने वाली पेशियों, तबादलों तथा अफसर की घुड़कियों से टूट तो वह पहले ही चुका था। पर संस्कार और सिद्धान्त उसका पीछा नहीं छोड़ रहे थे। किंकर्तव्यविमूढ़-सा वह घर पहुंचा। दोनों बच्चियों व पत्नी को सीने से चिपटा कर देर तक रोता रहा। फिर रिवाल्वर निकालकर एक के बाद एक तीन फायर कर दिये, और चौथी गोली से अपना काम तमाम कर डाला।

हेड ऑफिस में इस दुःखद घटना का संवाद पहुंचा। एस.पी. साहब ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए इतना ही कहा, 'मजो यों तो हाफ माइंड था। पुलिस में होकर ईमानदारी की बात करता था।'

□□

माधव नागदा

□

विकलांग

लगड़ा भिखारी बैसाखी के सहारे चलता हुआ भीख मांग रहा था।

'तेरी बेटी सुख से रहेगी। अहमदाबाद का माल लायेगी। बंबई की हुण्डी चुकेगी। दे दे सेठ लगड़े को रुपये दो रुपये।' उसने एक साइकिल की दुकान के सामने जाकर गुहार लगायी। सेठ कुर्सी पर बैठा-बैठा रजिस्टर में किसी का नाम लिख रहा था। उसने सिर उठाकर भिखारी की तरफ देखा।

'अरे, तू तो अभी जवान और हट्टा-कट्टा है। भीख मांगते शर्म नहीं आती? कमाई किया कर।'

भिखारी ने अपने को अपमानित महसूस किया। स्वर में तल्खी भर कर बोला, 'सेठ तू भाग्यशाली है। पूरब जनम में तूने अच्छे करम किये हैं। खोटे करम तो मेरे हैं। भगवान ने जनमते ही एक टांग न छीन ली होती तो मैं भी आज तेरी तरह कुर्सी पर बैठा राज करता।'

सेठ ने इस मुंहफट भिखारी को ज्यादा मुंह लगाना ठीक नहीं समझा। वह दुकान में भीख लायक परचूनी ढूंढने लगा। भिखारी आगे बढ़ा।

'ये ले, ले जा।'

भिखारी हाथ फैलाकर नजदीक गया। परन्तु एकाएक हाथ वापस खींच लिया मानो सामने सिक्के के बजाय जलता हुआ अंगारा हो। कुर्सी पर बैठ कर 'राज करने वाले' की दोनों टांगें घुटनों तक गायब थी।

□

अर्थसिद्धि

जंगल का राजा शेर वृद्ध हो चला था। शिकार में भी कष्ट होता। कई बार भूखे पेट रहना पड़ता।

एक बार उसने सभी जानवरों की सभा बुलायी और शिकारी जीवन से सन्यास लेने की घोषणा की। जानवरों को बहुत आश्चर्य हुआ। गीदड़ ने चकित भाव से पूछा, 'हे पशुश्रेष्ठ ! आपने ऐसा महान निर्णय किस प्रेरणा से लिया ?'

शेर इसी प्रश्न की प्रतीक्षा में था। बोला, 'जानवर बंधुओं, कल जब मैं ध्यानावस्थित था तो मैंने परमपिता परमेश्वर की एक झलक देखी। उस अद्भुत दृश्य को देखकर मैं अभिभूत हो गया। तत्काल मुझे आकाशवाणी सुनायी दी, 'हे जंगलाधीश। तू हिंसा का मार्ग त्याग कर मेरी शरण में आ। इसी में तेरा मोक्ष है। यही नहीं, इस जंगल का जो भी जानवर मुझे भजेगा वह भवबन्धन से छूट कर मुझे प्राप्त होगा।'

जगल के राजा की यह गुरु गम्भीर वाणी सुनकर सभा में सन्नाटा छा गया। पशुगण ईश्वर के बारे में तरह-तरह की अटकलें लगाने लगे। अन्ततः हाथी ने हिम्मत की, 'महाराज, ईश्वर के स्वरूप का भी कुछ बखान करें।'

'स्पष्ट तो मैं भी नहीं देख पाया, परन्तु यह निश्चित है कि ईश्वर का तेजोमय चेहरा आप में से ही किसी जानवर महोदय से मिलता जुलता था।'

यह कहकर शेर समाधिस्थ हो गया।

इधर जानवरों में भयंकर विवाद चल पड़ा। हाथी कहने लगा कि भगवान 'गजानन' है। सूअर ने ईश्वर को वराहमुख बताया। घोड़ा हिनहिनाया कि नहीं परमेश्वर अश्व जैसा है। प्रत्येक जानवर ईश्वर को अपने ही जैसा सिद्ध कराने में जुट गया। विवाद से हल नहीं निकलता देख वे एक दूसरे पर टूट पड़े। जंगल जो पशुओं के आपसी भाईचारे और सौहार्द के लिए प्रसिद्ध था, युद्ध का मैदान बन गया। लाशों के ढेर लग गए।

बचे खुचे पशु पुंगव जब थक हार कर चले गए तो शेर की समाधि भंग हुई। सामने कई दिनों की भोजन सामग्री बिछी देखकर उसकी बांछें खिल गयीं।

□□

मालती महावर

अतीत का प्रश्न

'मैं तुमसे शादी कर रहा हूं, मुझे तुम्हारे अतीत से कोई मतलब नहीं।'

'लेकिन मेरा तो कोई अतीत नहीं है, मेरे जीवन में आने वाले सिर्फ तुम हो तुम।'

कुछ दिन बाद पता चला, उसका प्रेमी विवाहित है, दो बच्चों का बाप। पत्नी पर चरित्रहीनता का आरोप लगाकर उससे तलाक लेना चाहता था।

'हूं, तो यह बात है, तुम मेरा अतीत इसलिये नहीं पूछना चाहते थे, ताकि मैं तुम्हारा अतीत न पूछ बैठूं। धोखेबाज, तुमने इतने दिन मुझे अंधकार में रखा लेकिन याद रखो मैं किसी औरत को जीवित दफना कर अपना भविष्य नहीं बनाना चाहती।'

'एक बात पूछूं ?'

'पूछो।'

'शादी से पहले तुम्हारा कोई प्रेमी-व्रेमी तो नहीं था ?' अब तो हम जीवन साथी बन गये हैं। एक दूसरे के अतीत का ज्ञान होना चाहिये।' पति ने उसकी तरफ प्रश्नवाचक दृष्टि से देखा।

और वह सोच रही थी कि इस बात का क्या जवाब दे ? जब उसका कोई अतीत ही न था, तो ऐसा व्यक्ति मिला जिसे उसके अतीत की जरूरत नहीं थी। लेकिन अब उसका अतीत बन चुका है। तब वह क्या कहे ?

□□

पद्म शर्मा 'मीर'

□

समाधान

कबीले के नेतृत्वहीन मुखिया ने पड़ाव डालने का आदेश दे तो दिया, पर उसे यह न मालूम था कि वे उस समय एक विशाल रेतीले समुद्र के बीचों-बीच थे

रहे थे। आशा तो थी कि तीन दिन में रेगिस्तान पार कर लिया जायेगा किन्तु अनुमान गलत निकला""और उस पर मुश्किल यह कि चौबीस घंटों की भूख अंतड़ियाँ कचोट रही थी। साथ की लकड़ी में से तिनका भी न बचा था और बिना आग खाना पकाना भी सम्भव न था।

मुखिया बोला, 'कोई खजूर-वजूर ही काट लो।'

अंधा! वह कैसे देखता कि आस-पास कोई नागफनी तक भी न थी, खजूर तो दूर।

अन्ततः एक आदमी ने दृष्टि दूर तक दौड़ायी। आशा की एक किरण दिखाई दी और छः-सात पुरुष उस दिशा में चल दिये।

दो-ढाई घंटे उपरान्त जब वे लौटे तो उनके कंधों पर लकड़ी थी और कपड़ों पर रक्त के धब्बे। एक-आध चेहरे पर खरोंचें भी दृष्टिगोचर हो रही थीं।

रक्त देख कबीले की औरतें अनायास चीख उठीं। मुखिया बौखला गया। उसने पूछा, 'क्या बात है?'

सब सहम गए।

फिर एक ने तनिक साहस किया। बोला, 'दादा, हमने तो प्रेम से कहा था कि आधी लकड़ हमें दे दो, आधी मे तुम्हारा काम हो ही जाएगा। न माने तो हमने फिर कहा। पर दादा, वे तो अड़ ही गये। तो हमने सोचा कि अगर हम भूखे रहे तो आगे कैसे बढ़ेंगे। हमारी समस्या का एक ही समाधान था कि उठाओ लकड़ और चलो। बस दादा, इत्ती-सी बात थी कि उन्होंने हम पर धावा ही न बोल दिया। अब दादा इसमें अपन का तो कोई दोस नहीं न?'

'लेकिन""', वृद्ध ने आँखें खोलने का निष्फल प्रयास किया। 'लेकिन, तुम यह लकड़ी कहाँ से उठाकर लाये?'

अब कौन बोले!

सबके भीतर चोर था।

'बोलते क्यों नहीं?' मुखिया चीखा तो एक ने थूक निगला, 'दादा,"" लकड़ियों के पास एक""लाश पड़ी थी।'

☐

मृगतृष्णा

जूते घिसाकर थका-टूटा नरेन शाम को घर लौटा तो धनपड़ बूढ़ी माँ मुहल्ले की दो-तीन औरतों से बतिया रही थी। बहुत खुश-खुश नज़र आ रही थी वह।

नरेन को देखते ही औरतों ने मुस्करा कर उसे कहा, 'बेटा, बधाई हो!'

'बधाई ? काहे की··· ?' आश्चर्य-मिश्रित मुस्कान फेंकते हुए नरेन ने पूछ लिया तो माँ ने बात पर से रहस्य का आवरण उठा दिया, 'वो बेटा···तुझे रोजगार मिल गया है न ! मैं इन्हें बतला रही थी कि मेरा बेटा कितना नसीब वाला है, चौदहवीं जमात पास करते ही नौकरी भी मिल गई।'

नरेन का चेहरा उसी क्षण मुरझा गया। विडम्बित भाव से उसने माँ का भ्रम तोड़ना चाहा, 'नहीं माँ, नौकरी इतनी आसानी से मिलने वाली चीज़ नहीं।'

माँ के मुख पर यकायक जरदी बादल बन कर छा गई। फिर तनिक संयत होते हुए बोली वह, 'अरे बेटा, बूढ़ी माँ से मसखरी करता है ? वो कार्ड जो सुबह तूने दराज में छुपा छोड़ा था···वो मैंने किसी बच्चे से पढ़वा लिया था···।'

नरेन ने मस्तिष्क पर थोड़ा जोर डालकर गुत्थी सुलझा ली। व्यंग्यपूर्ण हंसी होठों पर आ गई थी, फिर छत की दीमकग्रस्त शहतीरों को देखकर आह भरते हुए, उसने समझा दिया, 'माँ ! वह कार्ड रोजगार का नहीं, रोजगार दफ्तर का है। फिर किसी जगह हाजिरी भरनी होगी, नौकरी मिले, न मिले, मिले तो कितने बरस में। ···एक मृगतृष्णा का सहारा दिया गया है अभी।'

अब मृगतृष्णा का अर्थ नरेन माँ को समझाना नहीं चाहता था, सो जिन क़दमों से भीतर आया था उन्हीं से सड़क पर लौट गया···देर रात तक के लिए।

□□

रंगनाथ दिवाकर

□

सांड

मंत्रीजी के पुत्र ने एक मोटे ताजे सांड को फसल चरते हुए देखकर पूछा- 'पिताजी ! क्या यह वही सांड है जिसे दादी के श्राद्ध के अवसर पर दाग कर छोड़ा गया था ?'

पुत्र के भविष्य को लेकर चिंतित मंत्रीजी ने बेटे की पीठ थपथपायी बोले- 'तूने सही पहचाना बेटे !'

'लेकिन दागते समय तो यह एकदम मरियल-सा बछड़ा था। ओह ! कितना तड़पा था तब !' पुत्र कुछ चिंतित हो गया।

'देखो बेटे ! दागे जाने के बाद इसे सारे गाव की फसल को चरने का अधिकार मिला। साल भर में ही यह खा-पीकर मरियल बछड़े से मोटा-ताजा सांड बन गया। यह राजनीति भी ऐसी ही प्रक्रिया है। तुम व्यर्थ चुनाव लड़ने से डरते हो। एक बार कुछ तकलीफ होगी लेकिन फिर सारे राज्य को चर जाने का अधिकार मिल जायगा।' पिता ने समझाया।

'मैं इसबार चुनाव लड़ूंगा पिताजी !' पुत्र की आंखों मे सांड वाली शोखी उतर आयी।

□□

रवीन्द्र वर्मा

□

टमाटर

'श्रीमान, मैं टमाटर की बात करने आया हूं।' मैंने यह कहते हुए पैंट की दाईं जेब में हाथ डाला ही था कि आकाश, घास या पेड़ों में से दो आदमी उछले और उन्होंने मेरे दोनों हाथ पीछे से पकड़ लिए, हालांकि महामहिम से भेंट के लिए प्रवेश के पहले मेरी तलाशी हो चुकी थी।

'तुम्हारी जेब में क्या है ?' एक मेरे कान में फुसफुसाया ।

'टमाटर ।'

'दिखाओ ?' उसने कहा ।

मैंने दाईं हथेली पर टमाटर प्रदर्शित किया । मेरी भुजाएं आजाद हो गईं और दोनों आदमी जहां से आए थे वहीं विला गए ।

जब दोनों आदमियों ने मेरी भुजाएं कस ली थीं तो महामहिम फलों की क्यारी निहार रहे थे । अब उन्होंने मेरी हथेली पर टमाटर देखा तो मुस्कराए । उनकी मुस्कान से सारा उद्यान खिल उठा । पेड़ों पर कोयल गाने लगी । भौंरे क्यारियों में गुनगुनाए । सामने पेड़ के पीछे से मोर नाचता हुआ आया । उसके पंख पूरे खुले थे—हालांकि अभी बारिश नहीं हुई थी ।

'फरमाइये ।' महामहिम बोले ।

'आप मेरे हाथ में जो देख रहे हैं, उसे पहचानते हैं ?'

'टमाटर ।'

'इसका ज्यादा उपयोग कौन करता है ?'

'विपक्ष के लोग ।'

'क्या'''?'

'हां, उन्होंने टमाटर को अंडों के साथ मिलाकर मेरी चुनाव सभाएं भंग करने की कोशिश की मगर वे कामयाब नहीं हुए ।'

'मैं टमाटर के राजनैतिक उपयोग की बात नहीं कर रहा श्रीमान ।'

'फिर ?'

'मैं टमाटर के भोजन में उपयोग की बात करना चाहता हूं ।' मैंने कहा । नाचता हुआ मोर थरथराया । महामहिम हंसे ।

'कहिये ।' उन्होंने कहा ।

'मुझे टमाटर बहुत अच्छा लगता है। इसके बिना मेरे घर में चटनी नहीं बनती, और मैं इसे कच्चा खाता हूं।'

'हूं'''हां।'

'इधर लगता है टमाटर आढ़तियों ने गोदामों में दबा रखा है। टमाटर गोदाम में है और दाम आसमान छू रहे हैं।'

'अच्छा।' वह फिर हंसे। इस बार उनकी हंसी कुछ खिंच गयी। मुझे शक हुआ।

मैं फुसफुसाया, 'क्या यह आपकी विपक्ष को नीचा दिखाने की चाल है ?'

वे मुस्कराते रहे।

'लेकिन मैं खाना कैसे खाऊं ? क्या आपको मालूम है, बजार में टमाटर बारह रुपये किलो है, और सेब आठ रुपये किलो ?'

'बहुत बढ़िया, सेब खाइये जनाब।' उन्होंने कहा।

'लेकिन'''लेकिन सेब मैंने कभी नहीं खाया। बचपन से हमारे घर सेब नहीं आया। केला आया, अमरूद आया, खरबूज आया, तरबूज आया-सेब कभी नहीं आया। मुझे सेब खाने की आदत नहीं। मैं सेब खा ही नहीं सकता। सेब छूते हुए मुझे लगेगा कि जैसे मैं किसी रानी को छू रहा हूं।'

महामहिम हंसे।

'क्या आप टमाटर को आजाद नहीं कर सकते ?' मैं चीखा।

अब मेरे सम्मुख महामहिम नहीं थे। वही दोनों आदमी थे, जिन्होंने फिर मेरी बांहें कसीं और मुझे बाहर राजधानी की एक सड़क पर छोड़ दिया।

□□

राजेन्द्र मोहन त्रिवेदी 'बन्धु'

□

बलिवेदी

'सरला तुम समझने की कोशिश क्यों नहीं करती हो। हम मिलेट्री वालों को बॉर्डर पर फेमिली रखने की कतई अनुमति नहीं है।' अभय ने लहजे में कहा। 'मैं तुम्हारी बहानेबाजी अच्छी तरह समझती हूं। तुम नहीं चाहते कि मैं तुम्हारे साथ रहूं। लेकिन इस बार तो मैं तुम्हारे साथ अवश्य चलूंगी।' सरला ने क्रोधित होते हुये कहा।

'सरला! बस साल भर की ही तो बात है, जैसे ही मेरा कहीं अन्यत्र ट्रांसफर होगा, मैं तुम्हें अवश्य साथ ले जाऊंगा। तब तक तुम मेरे माता-पिता के साथ यहीं रहो। अभय ने पुन. समझाया। 'मैं कोई नौकरानी नहीं हूं जो इस घर का भार ढोती रहूं। शादी हुए दो साल हो रहे है। तुम ठीक से एक माह भी मेरे साथ नहीं रह सके। मैं आखिर नारी हूं। मेरी भी कुछ इच्छायें हैं। मेरी सहेलियों को देखो, अपने-अपने पति के साथ कितने ऐशो-आराम से रहती हैं। मेरी तो किस्मत ही फूट गई'''।' 'सरला ने रुआंसे स्वर मे कहा।

'सरला मेरी मजबूरी समझने की कोशिश करो। मेरे सामने यदि मजबूरी न होती, तो मैं तुम्हे अवश्य ले जाता।' अभय ने बहुत ही आत्मीयता से कहा। 'इस बार यदि साथ न ले गये तो, तुम मुझे जिन्दा नहीं देखोगे। मैं साल-साल भर प्रतीक्षा करती रहूं, तुम्हारे लिए तडपती रहू, क्या यही वैवाहिक जीवन का सुख है?' क्रोध और दुख भरे स्वर में सरला ने पुन: कहा।

सामने से माता जी को आता देखकर अभय ने कमरे से निकलते हुए कहा, 'सरला! मुझे पत्र लिखती रहना।' सरला अभय को जाते हुए असहाय सी देखती रही।

अभय शाम की गाड़ी से अपनी नौकरी पर लौट गया। और इधर हताश सरला ने आत्मदाह कर लिया।

दूसरे दिन अखबारों की बड़ी-बड़ी सुर्खियों मे समाचार छपा, एक और बहू, दहेज की बलिवेदी पर''''।

□

स्थानान्तरण

ऑफिस से निकलते ही बॉस की आवाज अनिरुद्ध बाबू के कानों में पड़ी और वह पलट कर साहब के पास पहुंचे।

–जी सर !

–तुम बाजार होकर घर जाओगे ?

–जी हां।

–यह दवाओं का पर्चा है, जरा बाजार से दवायें लेकर घर पर देते जाना।

पर्चा देख कर उसका सिर चकराने लगा और उसके हाथ की अंगुलियां पैन्ट की जेबें टटोलने लगीं। दुकान पर पहुंचकर उसे ज्ञात हुआ कि दवाओं का मूल्य लगभग सत्तर रुपये होगा। महीने का अन्तिम दिन होने के कारण काफी भाग दौड़ के बाद ही पैसे की व्यवस्था हो सकी। इसी चक्कर में वह दवाएं लेकर साहब के बंगले पर काफी विलंब से पहुंचा।

–मेम साहब ! ये दवायें हैं, साहब ने भिजवायी हैं !

–साहब ने तो पांच बजे ही दवायें भेजने के लिए कहा था और तुम अब आ रहे हो ?

–*मेरे पास पैसे नहीं थे। पैसे की व्यवस्था में विलम्ब""*

–हमारे गेस्ट लोगों के सामने तुम्हें इस तरह की *बातें करते हुए शर्म नहीं* आती ?

–मेम साहब ! जो सत्य है वह""।

–नॉनसेन्स ! तुम मुझसे जबान लड़ा रहे हो। आने दो साहब को""।

और दूसरे दिन शाम को जब वह पुनः ऑफिस से निकल रहा था कि बॉस की आवाज उसके कानों में गूंजी। 'बड़े बाबू यहां आओ।'

–जी सर !

मुझे खेद है, तुम्हारा कार्य संतोषजनक न होने के कारण मुझे यहां से तुम्हारा स्थानान्तरण करना पड़ रहा है। कल सुबह आकर अपना स्थानान्तरण-पत्र ले लेना।

□□

रतीलाल शाहीन

□

क्रांति का मोड़

'मैं बोलता है न, बस आगे नहीं जाएगा। आप उतर जाना।'

'ऐसा क्या करते हैं! आखिरी बस है। ले लीजिए न! बरसात भी आ रही है!'

उसके अनुरोध के बावजूद भी कंडक्टर ने बस फिर रुकवा दी और वह महिला कुछ क्रोध, कुछ आवेश और कुछ अपमान का भाव लिए बस से उतर पडी।

यों जगह बहुत थी लेकिन कंडक्टर कुछ उखड़े हुए मूड में था। बस में वैसे तो दस-बारह मुसाफिर खडे होकर आसानी से जा सकते थे। फिर भी, कंडक्टर अपनी जिद पर अड़ गया था। उसने स्टैंडिंग यात्री लिए ही नहीं!

ग्यारह बज कर दस मिनट की यह आखिरी बस थी। चर्चगेट से कुलाबा जाने वाली। बरसात में यों भी गाडियां विलंब से चल रही हैं। तिस पर लटकते हुए आना और भागकर बस पकडना, पुरुषों के लिए तो एक युद्ध के समान बात थी ही, औरतों के लिए अग्नि परीक्षा थी।

सहसा उसे गुस्सा आ गया और बरसात में भी जबकि सिर पर दफ्तर के 'मस्टर' में क्रॉस होने का डर भरा रहता है, कंडक्टर की यह अनावश्यक ज्यादती वह सहन नहीं कर पाया। उसने बस की घंटी खींच दी। कंडक्टर चीख पडा, 'आपने घंटी क्यों खींची?'

'मिस्टर कंडक्टर! आप उस महिला को मेरे बदले बिठा लीजिए! मैं बस से उतर रहा हूं।' और, नीचे उतर कर उसने महिला को बस में चढ़ जाने का आदेश-सा दिया।

महिला के बस में चढ़ते ही बस चल पड़ी। उसने देखा, अन्य मुसाफिरों के चेहरों पर हवाइयां उड़ रही हैं।

अभी वह फोर्ट के अगले मोड़ पर पहुंचा ही था कि उसने देखा वह बस अचानक बिगड़ गई है। और विवशतावश सभी सवारियां उतर रही हैं।

उसे लगा, यह मोड़ बस के बिगड़ने का मोड़ नहीं है। यह तो क्रांति के आने का मोड़ है।

□□

रामकुमार घोटड़

□

ढपोर शंख

एक अनाथ ब्राह्मण बालक था। भक्ति भाव में लीन रहता। दीन दुनिया से दूर। मां-बाप द्वारा छोड़ी गयी सम्पत्ति खत्म हो गयी और भूखों मरने की नौबत आयी।

अब उसने पहाड़ों मे आकर, भूखे प्यासे, नगे बदन वर्षों तक कठोर तपस्या की। शिव उसकी भक्ति से प्रसन्न होकर प्रकट हुए और वर मांगने को कहा।

'हे भगवान, मुझे ऐसा शंख दो, जिससे मैं जो भी मांगू वही वस्तु तुरन्त हाजिर हो जाय।'

शिव ने उसे शंख देते हुए कुछ हिदायतें भी दी। 'प्रभात के समय गंगा तीर जाकर स्वयं स्नान करो और इसे भी कराओ। घर आकर बारी-बारी से चारों दिशाओं की तरफ मुख करके इसमें फूंक मारो-फिर जो भी मांगोगे, मिलेगा।'

शिव के समझाए अनुसार सभी नियमों का पालन करते हुए वह हमेशा शिव भाव से तरह-तरह के पकवान, मिठाईयां और स्वादिष्ट भोजन की मांग करता और खा पीकर पूरे दिन मस्त रहता। भक्ति भाव छूट गया। उसकी जगह आलस्य ने ले ली।

एक दिन गंगा तीर से लौटते समय गंगा घाट का पण्डा उससे बोला—

'भोला। तुम अपने शिव शंख के बदले में मेरा यह चमत्कारिक शंख ले लो इससे तुम जब भी जिस वस्तु को जितनी भी बार मांग करोगे, शंख कभी इन्कार नहीं करेगा और गंगा किनारे आने की जरूरत भी नहीं होगी।'

ब्राह्मण युवक ने खुशी-खुशी शंख बदल लिया। वह वैसे भी शिव के बताए बंधनों को निभाते-निभाते परेशान हो गया था।

घर आकर उसने पण्डे के शंख से मांग की। 'भूख लगी है, स्वादिष्ट भोजन चाहिये।

'हां मिलेगा'-शंख से आवाज आई।

'उम्र को देखते हुए अब मैं जवान हो गया हूं। मुझे एक सुन्दर स्वर्ग परी सी बीबी चाहिये।'

'क्यों नहीं ···। जरूर मिलेगी·····'

और तुम जानते ही हो, जब बीबी आ जाती है तब उसके लिये एक आलीशान बंगला भी चाहिये।'

'मिलेगा, जरूर-जरूर मिलेगा, हर हालत में मिलेगा।'

तीन चार दिन बीत गये। वह परेशान हो उठा। शंख के हां करने के बावजूद भी कुछ नहीं मिल रहा था। आखिर भूख ने उसका संयम तोड़ दिया और शंख पर झल्ला उठा। तुम सिर्फ हां ही भरते रहते हो, देते कुछ नहीं-क्या बात है ····?

भैया। नाराज मत होना। मैं शिवजी का शंख नहीं बल्कि नेताजी का शंख हूं- ढपोर शंख·····मेरे पास कोरे आश्वासनों के अलावा देने को कुछ भी नहीं है।' और शंख उसके हाथ से छिटक कर दूर जा गिरा।

□□

रामनिवास 'मानव'

□
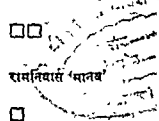
औरत की भूख

वह आदमी है या जीवित पहेली, कहना मुश्किल है। औरों की तो बातें छोड़िये, पूरे पांच साल सिर खपाने के बाद पत्नी भी उसके स्वभाव को समझ नहीं पाई।

बेचारी पत्नी भी क्या करे? स्वभाव ही कितना विचित्र है उसका! पानी मंगाया, पर पत्नी के पानी का गिलास लेकर आते-आते प्यास खत्म। कभी

बिना लड़के की सब्जी देखो अच्छी नहीं लगती, तो कभी लड़के से सख्त नफरत। कभी दो ही चपातियां खाकर उठ जाता, तो कभी थाली से उठने का नाम ही नहीं।

पत्नी हल्के-से मुस्करा भर देती है– हे भगवान्, सभी आदमी ऐसे ही होते हैं क्या?

वह रात खाने बैठा, तो खाता ही रहा। सब्जी, दाल, सलाद सब पत्नी के आने से पहले ही साफ। वह खाने बैठी, तो थाली में दो चपातियां ही थीं।

'इतने से काम चल जायेगा?'

'हां।'

'क्यों, भूख नहीं लगी है क्या?'

'लगी है ना।'

'फिर?'

'आज कम हैं, तो कल मैंने दो चपातियां अधिक खा ली थीं।'

'लेकिन तुम्हारी भूख····?'

'औरत की भूख का क्या! अधिक चपातियां बच जावें, तो भूख अधिक और कम बचें, तो कम।'

□

सांप

तड़ातड़ तीन लाठियां पड़ीं, सांप तड़प कर वहीं ढेर हो गया।

एक बोला— 'मैंने ऐसी जमाकर लाठी मारी थी कि टिकते ही सांप के प्राण निकल गये।'

'तुम्हारी लाठी ठीक जगह नहीं लगी थी। सांप मरा तो मेरी लाठी से था।' दूसरा बोला।

'तुम दोनो झूठ बोल रहे हो।' तीसरे ने कहा—'यदि मेरी लाठी न टिकती, तो सांप मरता ही नहीं। तुम्हारी लाठियां खाकर तो सांप उलटा काटने लपका था।'

'झूठ!' एक साथ पहले दोनों के मुख से निकला। फिर एक बोला 'सांप को मारा हमने और श्रेय तुम लेना चाहते हो।'

'यह बिल्कुल न होगा।' दूसरा बोला।

तीसरा बोला—'न होगा, तो न सही। सांप तो मैंने ही मारा है।'

बात बढ़ी, बात बिगड़ी। थोड़ी देर पहले जो लाठियां सांप पर चली थीं, वे अब एक दूसरे पर चल रही थीं। एक का सिर फूटा, दूसरेकी बाजू टूटी, तीसरे को भी गम्भीर चोटें आईं। तीनों पड़े तड़प रहे थे।

मरे हुए सांप ने तीनों को डस लिया था।

□□

राम यतन प्र. यादव

□

विडम्बना

वह खटिया पर बैठे पिछले दिनों की ओर लौट चुका था—

मुर्गी अपने अंडों को सेती है और माली अपने बाग में खिले फूलों, फलों की तीमारदारी करता है। उसने भी अपनी इकलौती बेटी को पाला-पोसा था। गरीबी के दलदल में आकंठ डूबे रहने के बावजूद उसने अपनी बेटी को गुणवती बनाने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी।

बुढ़ापे की दहलीज में कदम रखे कमरु की एक मात्र इच्छा यही रह गई थी कि उसकी आँखों के सामने ही उसकी बेटी की डोली धूम-धाम से उठे। बारात की सजावट को देखकर लोग-बाग चहक उठें। वह अपनी बेटी का रिश्ता लेकर कई लोगों के पास गया। जी भरकर गिड़गिड़ाया। मिन्नतें कीं।

किन्तु, दहेज की मोटी रकम की माँग ने उसकी तमाम आरज़ुओं पर उल्कापात कर दिया। ज़मीन-जायदाद उतनी थी नहीं जिसे बेचकर............।

वह प्यास से बेचैन उठा। घड़े के नजदीक पहुंचते-पहुंचते आखिरकार उसने एक भयंकर योजना मन ही मन बना डाली और उसे क्रियान्वित करने हेतु भरी दोपहरिया में घर से निकल पड़ा।

शाम को जब वह घर वापस पहुंचा तो उसकी आँखों पर मोटी-मोटी पट्टियां बंधी थी, और वह एक आदमी का सहारा लेकर चल रहा था। बापू को इस दशा को देखकर बेटी की आँखों में आंसुओं का सैलाब उमड़ पड़ा, बापू·······यह·······सब·······कै·······से·······?

'चुप रह पगली। तू क्यों रोती है?' बेटी के माथे पर हाथ धरकर उसने कहा, 'देख मैं कितना रुपया लाया हूं।'

उसने जेब से नोटों का पुलिंदा निकालकर बेटी की ओर बढ़ा दिया। बेटी की आँखें आश्चर्य से फटी की फटी रह गयी।

'तीन चार दिन पहले अख़बार में एक विज्ञापन देखा था। लिखा था-एक धनिक को अपने अन्धे बेटे के लिए·····सो वहां पहुंचकर दस-दस हजार में मैंने अपनी दोनों आँखें बेच दी। अब मैं अपनी रानी बेटी को धूमधाम से ससुराल विदा कर सकूंगा।'

'मगर यह सुख तुम देख तो नहीं सकोगे बापू।'

बेटी की बात सुनकर एकबारगी तो रमरू का रोम-रोम काँप गया। फिर बोला, 'पगली, बेटी की विदाई देखने की नहीं महसूसने की होती है।'

□□

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'

□

संस्कार की बात

साहब के बेटे और साहब के कुत्ते में विवाद छिड़ गया। साहब का बेटा कहे जा रहा था—'यहां बंगले में रहकर तुझे चोंचले सूझते हैं और कहीं होते तो

एक-एक टुकड़ा पाने के लिए घर-घर झांकना पड़ता। यहां बैठे-बिठाये तर माल खा रहे हो। ज्यादा ही हुआ तो दिन में कभी-कभार आने जाने पर गुर्रा पड़ते हो।'

कुत्ता हंसा—तुम बेकार में क्रोध कर रहे हो। यदि तुम भिखारी के घर पैदा हुए होते तो मुझसे और भी अधिक ईर्ष्या करते। जूठे पत्तल चाटने का मौका भी न मिल पाता। तुम यहीं रहो, खुश रहो यही मेरी इच्छा है। 'मैं तुम्हारी इच्छा के बल पर यहां रह रहा हूं? हरामी कहीं का'—साहब का बेटा भभक पड़ा।

कुत्ता बोला, 'गाली देते हो, दे लो। अपने-अपने संस्कार की बात है। मेरी देखभाल साहब और मेम साहब दोनों करते हैं। मुझे कार से घुमाने ले जाते हैं। तुम्हारी देखभाल नौकर-चाकर करते हैं। उन्हीं के साथ तुम बोलते बतियाते हो। उनकी संगति का प्रभाव तुम्हारे ऊपर जरूर पड़ेगा। जैसी संगति में रहोगे, वैसे संस्कार बनेंगे।'

साहब के बेटे का मुंह लटक गया। कुत्ता इस स्थिति को देखकर अफसर की तरह हंस पड़ा।

□□

रावी

□

प्यार-भरी रोटी

धन-धान्य से सम्पन्न एक राज्य में एक बार अन्न का 'अकाल' पड़ गया। वर्षा अच्छी हुई थी, सूर्य-ताप ठीक मिला था, उपज भरपूर हुई थी, फिर भी उस वर्ष अन्न कम पड़ गया—यह राज्याधिकारियों के चिन्ता और खोज का विषय था।

खोजने पर पता चला कि कुछ अधिक धनी, साधन-सम्पन्न लोगों ने अन्न को गलाकर विविध प्रकार के वैभव-वस्त्रों, विलासिता के पेयों और अन्य प्रसाधनों में परिवर्तित कर लिया था। ऐसे प्रयोग एवं उत्पादन भर के लिए विपुल

वैज्ञानिक एवं रासायनिक दक्षता उन देशवासियों को प्राप्त थी। इस वास्तुक परिवर्तन के फलस्वरूप अन्न का एक बड़ा अंश अलभ्य हो गया और मध्य एवं निम्न वित्तीय जनता के भूखे रहने की स्थिति आ गई। धनी और विलासिता प्रिय होना उस देश में कोई अपराध नहीं था, पर अन्न के इस सीमा तक लोक-घातक दुरुपयोग की प्रवृत्ति उनमें कैसे जागी और उसका निराकरण अब क्योंकर होना चाहिये इस जांच के लिए राजपुरुषों की एक समिति नियुक्त कर दी गई।

खोजों और सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ कि पिछले दशाधिक वर्षों से रोटी के अन्न निमित्त सभी पदार्थों के स्वाद में एक नीरसता आ गई थी और लोगों को वह भोजन अस्वादु एवं अरुचिकर लगने लगा था, इसलिए सम्पन्न जनों ने स्वाद परिवर्तन एवं अन्यथा सुख-लाभ के लोभ से उसका यह दुरुपयोग कर लिया था।

विज्ञ मनोवैज्ञानिकों और वैज्ञानिकों की एक उपसमिति ने इस समस्या का कारण और हल खोज निकाला।

कुछ ही दिनों बाद हो सकता है, कुछ नये तथ्य प्रकाश में आये हों। राजकीय सूचनाओं से प्रेरित, देश के सभी नगरों के सूचना-पटों में विषाक्त भोजन से मरने वालों के समाचार प्रकाशित होने लगे। राजकीय घोषणा प्रकाशित हुई कि पिछली फसल के अन्न में किन्हीं कारणों से वृष्टि-जल के दूषित हो जाने से, विष-कीटाणु आ गये हैं, अतः उसका प्रयोग न किया जाय, लोगों के पास एकत्र अन्न राजकीय आधे मूल्य पर खरीद लेगा और उसे भोजन से भिन्न अन्य वस्तुओं के निर्माण में लगा देगा।

विज्ञप्ति के प्रसारित होते ही लगभग सभी अन्न-संग्राहकों ने अपना अन्न प्रशासन के हाथों निर्विरोध और सहर्ष बेच दिया।

राजकीय व्यवस्थानुसार एक निश्चित दिन से राज्य का एक नया, वृहद पक्वान्न विभाग चालू हो गया। नगर नगर, गाँव-गाँव में राजकीय रसोई-गृह खुल गये और नागरिकों की आवश्यकतानुसार उनके घरों में माध्यमिक मूल्य पर दोनों जून ताजा पकी रोटियों और सालनों के पहुंचाने का कार्य आरम्भ हो गया।

इस नये विभाग में देश की एक करोड़ चुनी हुई, सुन्दर प्रीतिमयी, स्नेह सेवामयी नारियाँ ही नियुक्त की गई थीं।

अगले पाँच वर्ष के भीतर रोटियों का स्वाद मधुरतर हो कर उस देश के निवासियों को वापस मिल गया, साथ ही खाद्यान्न की प्रचुरता और लोक-स्वास्थ्य भी।

वैज्ञानिक उपसमिति की खोज भी सविवरण बाद में प्रकाशित हुई। नारी के हाथ का मधुर स्पर्श पक्वाग्नि में बहुत कुछ छूट गया था, यही रोटी की विरसता का कारण था। नवीन व्यवस्था से पुरुष वर्ग को नारी के प्यार से संस्पृष्ट रोटियाँ और परोसन के नाते उसका जो प्रत्यक्ष एवं विपुलतर सम्पर्क सुलभ हुआ उसने पुरुष वर्ग की सुरुचि और शालीनता को जगा दिया। उसकी सूखती हुई प्रीति एवं सहानुभूति की प्रवृत्तियों को सींचकर 'सभी के लिए पर्याप्त रोटी' महत्व उजागर कर दिया। नारी के निकटतर सम्पर्क ने पुरुष की भौतिक परिग्रह और छिछली विलासिता की प्रवृत्तियों को समाप्त कर उसे प्रेम और मांगलिक लोक-सृजन की ओर उन्मुख कर दिया।

□□

रूपसिंह चन्देल

□

दायित्व

स्टॉप पर खड़ा मैं बस की प्रतीक्षा कर रहा था। वह मेरे पास आयी और गिड़गिड़ाती हुई बोली, 'बाबू दस पैसे''''कल से भूखी हूं।' मैंने ऊपर से नीचे तक उसे घूरकर देखा। गन्दी चेगती लगी धोती में लिपटा उसका शरीर अच्छा खासा हट्टा-कट्टा था। मुझे अपनी ओर देखते हुए वह पुनः गिड़गिड़ाई, 'बाबू दस पैसे''''।'

मुझे उसका गिड़गिड़ाना बुरा लगा। मैंने उससे कहा, 'इतनी हट्टी-कट्टी हो, कोई काम क्यों नहीं कर लेती?'

'काम''''?' मुंह बिचकाती हुई वह बोली।

'हां''''हां''''भीख मांगने से तो मेहनत-मजूरी करके''''।'

मेरा वाक्य पूरा होने से पहले ही वह बोली, 'आप देंगे मुझे अपने यहां काम?'

'मैं''''मैं'''' 'मैं बुरी तरह हकलाने लगा। शब्द गले में ही फंसकर रह गये। वह मुझे उपेक्षापूर्ण नजरों से देखती हुई कुछ बुदबुदाती आगे बढ़ गई।

□□

घरदीचन्द राव 'विचित्र'

□

सेवा

'सुनो ! बुआजी की तबियत बहुत अधिक खराब है, उनका समाचार आया है–एक बार मिल आओ।' रमेश ने घर में प्रविष्ट होते ही अपनी पत्नी राधा को सुनाया।

राधा रसोईघर में से ही झल्लाती हुई बोली—

'भाड़ मे जाए तुम्हारी बुआ। मरी पड़ी पड़ी खांसती रहती है। कहीं बच्चों को इन्फेक्शन हो गया तो ? अपना रोना रोती रहेगी सारे समय। तुम्हीं देख आओ, मुझे नहीं आना।'

रमेश ने बात को जोड़ते हुए फिर कहा—

'उन्होंने पत्र लिखवाया है कि अब मेरा अंतिम समय है, न जाने क्या हो ? सभी बधुओं को अपनी बनारसी काम की साड़ियां मरने से पहले बांट दूं।'

राधा रसोई का दरवाजा फुर्ती से बन्द कर रमेश के पास आकर बोली— 'च्च च्च ! बेचारी का कितना प्रेम है सब पर, अरे राम ! मैं तो उनकी बीमारी का सुनकर ही इतनी दुःखी थी कि सेवा का अवसर कब मिले ? अब मुंह क्या ताक रहे हो, जाओ रिक्शा लेकर आओ। मैं बच्चों को तैयार करती हूं। आखिर इनके पिता की भी तो बुआ है, ये भी तो मिलेंगे। ऐसे बुजुर्गों की सेवा से ही तो शुभ आशीष मिलता है।'

□□

विक्रम सोनी

□

तीन सौ पैसठ दिनों बाद

रघुआ की देह में जैसे हजारों हाथ, पांव लग आये थे। उसे न दिन याद रहा, न तारीख, लेकिन उस सुबह सरपंचजी के द्वाय क्षेत्र के विधायक

झोपडी के द्वार पर खडे थे। वह माथा झुकाकर जोहारता, इससे पहले ही एक नया कंबल ओढाते हुए उन्होंने कहा था, 'तेरे दिन जाग गए रे रमुआ।'

जब तक कम्बल पर एक परत धूप की तह जमती, तब तक उसे पच, सरपच पटेल अपने हाथों से खिलाते-पिलाते रहे। कुछ दिनों बाद मंत्री महोदय फिर पधारे। उन्होंने रमुआ को तीन पहिए वाली साइकिल पर बैठाकर घुमाया और कहा, 'हम देश के प्रत्येक रमुआ को हाथ देंगे, पांव देंगे, आंख देंगे।'

रमुआ फिर नया हो गया। वह लोगों के हाथों खाने लगा, लोगों के सहारे चलने लगा।

ढलते दिन की बेहद खुशनुमा मौसम में, रमुआ को साईकिल पर बैठाकर, गांव के दो गबरू जवान घुमाने निकले। वे रमुआ के सुनहरे दिनों की चर्चा कर रहे थे। तभी सामने से दो बिगडैल साड लड़ते-भिडते आते दिखे। उनका गुस्सैला रूप देखकर दोनो जवान जी-जान लेकर भाग निकले। रमुआ की लुढकती साइकिल एक साड के पांवो से टकराकर उलट गयी।

सांडो के बिदककर भागते ही दोनों जवान लौट आये। एक ने साईकिल सम्हाली दूसरा रमुआ को उठाने लपका। उसे मना करते हुए रमुआ ने कहा– 'रहने दो भाई, रहने दो। तुम्हारे हाथों कितने कौर खाऊंगा? तुम्हारे पांवों कितनी दूर चलूंगा? एक दिन मुझे अपनी देह पर हाथ, पांव उगाने तो पड़ेंगे ही।' और वह घसिटता हुआ अपनी झोपड़ी की तरफ बढ गया।

□

गांव का गरहन

वह बडे भिनसारे उठता, खटिया के नीचे जमीन पर पांव रखने से पूर्व धरती को छू-छूकर तीन दफे अपने माथे से छुवाता, घास फूस बोरूओं के आगे रखकर लोटा बाल्टी लिए कुएं पर पहुंचता। दीशा-मैदान, दातून से फारिग होकर गाय दुहता, दूध चोवड़ा खाकर सीधे खेतों पर जाता। उसकी महतारी मझेनी (दोपहर का खाना) पहुंचाने खेत पर ही जाती थी।

संझा को बैल, गायों को लेकर लौटता तो उसके कांवर में एक तरफ सूखी लकड़ी होती, दूसरी तरफ घास मवेशियों के लिए। हाथ मुंह धोकर दीया बार,

मां के पास बैठकर अपना और अपने गांव का भविष्य खोजता। वहां खुशहाली दिखती।

एक दिन गांव में बिजली आ गयी। दीये बुझ गये। रस्सी बाल्टी की जगह खम्बों ने ले ली। हल बैलों की जगह ट्रैक्टर कमाने लगे। पक्की सड़कें बन गयीं। उसकी रोजी रोटी छिन गयी। कोई बात नहीं गांव खुशहाल हो रहा था।

एक सुबह उसने देखा कि सूरज उग ही नहीं रहा है। चांद भी छुप चुका है। चारों तरफ अंधेरा ही अंधेरा। विकट अंधेरा गांव भर को घोप चुका था। बिजली भी नहीं जल रही थी। उसे दुःख था कि ऐसा हो रहा है तो वह पंचायत भवन का उद्घाटन होते नहीं देख सकेगा।

वह उदास, आले में औंधी पड़ी तेल कट दीए को तेल बत्ती से सजाकर जैसे ही माचिस की काड़ी जलाने वाला था कि मां ने रोकते हुए कहा-'न-न दीया मत बारना। देखता नहीं सूरज को गरहन लगा है।'

□□

श्यामबिहारीसिंह 'श्यामल'

□

समीकरण

शोषित-दमित 'गीतों' का दल अपनी व्यथा सुनाने राजा के पास पहुंचा। वहां वह देख सभी अचम्भित रह गए— राजा आराम से लेटा हुआ था;···· 'आतंक', 'अपराध', 'भ्रष्टाचार' व 'शोषण' सेवक मुद्रा में उसकी देह दबा रहे थे और दासीमुद्रा में खड़ी 'महंगाई' व 'अराजकता' पंखा झल रही थी····

□□

श्याम मनोहर व्यास

□

पारिश्रमिक

वह पच्चीस वर्षों से अनवरत साहित्य साधना कर रहा था। राष्ट्रीय स्तर की शायद ही ऐसी पत्रिका हो जिसमे उसकी छोटी-बड़ी रचना नहीं छपी हो। पर मानदेय या पारिश्रमिक के रूप मे उसे जो चेक या मनिआर्डर मिलते वह ऊंट के मुंह मे जीरा ही होता। प्रेमचन्द की यह उक्ति कि 'साहित्यकार कलम का मजदूर होता है' उसने हृदयंगम करली थी।

एक दिन एक प्रसिद्ध पत्रिका के संपादक ने उसे लिखा—'कृपया गिरनार के भव्य जैन मन्दिरो पर यात्रावृत्त लिख भेजिये। साथ ही यह भी बताइये कि आप पारिश्रमिक क्या लेंगे ?'

उसने जवाब मे लिखा :—'कृपया मुझे कस्बे से गिरनार तक आने जाने का बस टी. ए. डी. ए. दे दीजिये, पारिश्रमिक नहीं चाहिये।'

संपादक के उत्तर का उसे अभी इन्तजार ही है।

□□

शराफत अली खान

□

सांप और आदमी

शहर की कचहरी से थोड़ी दूर सड़क के किनारे नीम और जामुन के वृक्षों की शीतल छांव मे अदालती तारीख पर आए ग्रामीणों को इकट्ठा कर एक मदारी तमाशा दिखा रहा था।

मदारी की डुगडुगी की तेज आवाज देखने वालों के दिलों की धड़कनों को एकबारगी तेज कर देती थी।

काफी मजमा इकट्ठा हो जाने पर मदारी ने डुगडुगी को एक दो बार जोर से झटका। फिर चादर ओढ़कर सोये लड़के से बोला—

— बेटा-जमूरे !

— हां, मदारी !

— साहब लोग सोच रहे होंगे कि अब तक हम लोग सपेरे थे। तरह-तरह के जहरीले सांपों को दिखाकर लोगों का मनोरंजन करते थे····

— मगर अब हम लोग मदारी बनकर आ गए, यही न मदारी ?

— हां, जमूरे ! मगर तुझे पता है कि हम सपेरे से मदारी क्यों बने ? जरा तू बाबू लोग, साहब लोग और गांव भाइयों को भी बता दे।

— 'मदारी !' ····, 'हां बेटे जमूरे !'

— ···· पहले हमें सांप घने जंगलों, खेत खलिहानों और बाग-बगीचों में मिल जाते थे····।'

— जमूरे ! मगर अब क्या हुआ ? कहां गए सांप ?

— मदारी ! अब सांप जंगलों, खेत खलिहानों या बागों, बिलों में नहीं रहे, अब सांप लोगों के दिलों में घर कर गए हैं····।

□

इक्कीसवीं सदी का भाग्यशाली व्यक्ति

दर्जी की वह दुकान नगर की प्रतिष्ठित दुकान थी जो आधुनिक डिजाइनों की होड़ में सबसे अलग थी।

एक दिन एक कमीज के कपड़े की कटिंग करते समय दर्जी की कैंची भूलवश गलत जगह चल गई और दर्जी सिर पकड़कर बैठ गया। खेद नुकसान का नहीं साख का था।

दर्जी के युवापुत्र ने जब अपने पिता को चिन्ताग्रस्त देखा तो उसने कारण पूछा, कारण जानने पर वह भी सोच में पड़ गया, तभी उसके आधुनिक मस्तिष्क में बिल्कुल नया विचार कौंधा, उसने अपने पिता से कहा—आप चिन्ता न करें, उस कमीज को मैं सही करूंगा।

दर्जी के युवापुत्र ने कमीज के सामने के कटे भाग पर दुकान के नाम की चिट की पूरी लम्बी पट्टी लम्बाई में सिल दी इसी तरह दूसरी तरफ भी किया और पिता से बोला-इस कमीज के ग्राहक के आने पर आप मुझे बुला लेना, मैं उससे कहूंगा कि इक्कीसवीं सदी की यह पहली और एक मात्र आधुनिकतम कमीज है और वह आगामी इक्कीसवीं सदी का प्रथम भाग्यशाली व्यक्ति हैं।

□□

शहंशाह आलम

□

गॉड गिफ्ट

डॉ. रोजी ने उन दोनों को अजब-सी दृष्टि से देखा। हैरानकन लफ्जों में बोली— 'चाइल्ड गॉड गिफ्ट होता है, तुम लोगों को क्या हो गया है जो चाइल्ड नहीं चाहता ?'

रचना डॉक्टर के सवाल पर क्या जवाब देती, उसने तो मां बनने की लालसा को खुद नहीं दबाया था। उसकी निगाहें अनूप के चेहरे पर अटक गई। अनूप थोड़ा झिझका, रचना के मां बनने के अधिकार उसे मर्माहित कर रहे थे, पर वह अपने पड़ोस के बच्चों वाली की स्थिति से जानकार था। 'ईश्वर बच्चा तो देता है, मगर शायद उसे यह पता नहीं कि बच्चों को उसने पेट क्यों दिया-भूख क्यों दी ? कम से कम हिन्दुस्तानी बच्चो को इन सब चीजों से निजात दिला देते।' यह सब सोचकर अनूप चेयर पर से उठ खड़ा हुआ— 'मैं मानता हूं, डॉक्टर ! बच्चे ईश्वर के दिये उपहार होते हैं। मगर जब हम खुद दो-दो, एक-एक वक्त भूखे रहते हैं तो फिर, बच्चा आने के बाद हमारा क्या होगा— यह समझती हैं आप ?'

डॉ रोजी की बूढ़ी आंखें घबरा-सी गईं। अनूप की बातों पर और दीवार पर टंगी तस्वीर में से झांक रहे जीसस के चेहरे को ताकती ही रह गई। शायद वह दुआ मांग रही थी कि तू अपने बन्दों को खुशहाल बना, जिसे लोग 'गॉड गिफ्ट' का नाम देते हैं, उसके महत्व को बरकरार रख।

□□

सतीशराज पुष्करणा

□

परिभाषा

कोई शिक्षा पदाधिकारी एक गैर सरकारी यात्रा में किसी गांव में गये। अपने दूर के किसी रिश्तेदार के साथ वह ताजी हवा में टहलने की गरज से खेत-खलिहानों की सौंधी मिट्टी की सुगन्ध का सुमानन्द लेते चले जा रहे थे कि उनकी दृष्टि घनी-छांव वाले एक वृक्ष के नीचे सलोके से बनी एक झोंपड़ी पर पड़ी। उन्होंने अपने रिश्तेदार से पूछा, 'गांव से दूर वृक्ष के नीचे अकेली यह झोंपड़ी किसकी है?' 'यह स्कूल है।' रिश्तेदार ने प्रत्युत्तर दिया।

—कितने बच्चे पढ़ते होंगे इसमें ?

—यही कोई चार-छः बच्चे प्रतिदिन आते हैं, और कुछ देर इधर-उधर खेल-खेल कर अपने-अपने घरों को लौट जाते हैं।

—यहां के मास्टर साहेब कौन हैं ?

—मास्टर साहेब को तो आज दिन तक कभी देखा ही नहीं।

—फिर, यह कैसा स्कूल है ?

—सरकारी है।

शिक्षा पदाधिकारी सरकारी स्कूल की परिभाषा सुनकर अवाक् रह गये।

□□

सिद्धेश्वर

□

एक बेटे की कीमत

तीन औरतों के एक-एक लड़का था लेकिन तीनों लड़के मर चुके थे। तीनों औरतें अपनी-अपनी शोक कथा सुना रही थी—

—मेरे तो भाग्य फूट गए। लड़के को पढ़ाने-लिखाने मे उसके बप्पा ने हजारों रुपये लगाए लेकिन हम लोगों को उससे मिला क्या? बेरोजगारी की वजह से गंगा नदी में कूद कर मर गया पगला।

—अरी सखी! मरने वाले को कौन रोक पाता है? लेकिन यह तो किस्मत थी मेरी कि मेरे बेटे ने आत्महत्या नही की बल्कि रेल दुर्घटना में मारा गया। सरकार ने मुझे दस हजार रुपये दिये। बेचारा बहुत अच्छा था।

—तुम ठीक कहती हो सखी। किस्मत में लिखे को कौन मिटा सकता है भला! मेरा भी फूल सा बेटा था। मर गया क्या करें। यह तो हमारी किस्मत थी कि मरने के पहले हमे पचास हजार रुपये दे गया।

—वो कैसे री? !....

—उसकी शादी मे पचास हजार रुपये दहेज लिए थे मैंने। शादी के चार दिन बाद ही बस दुर्घटना मे मारा गया बेचारा!....'

□□

सुदर्शन राघव

□

प्रसाद

'यार रांझा आज तो तेरे पौ बारह समझ, ये विदेशी स्साले बिन मांगे ही बोत पैसे देते हैं। ले जा तांगे में और घुमा अपना शहर।' गंगु की आवाज तांगे की टिकटिक और हवा की तेज आवाज में कहीं डूब सी गई।

रांझा दिन भर उस विदेशी दम्पति को लिये घूमा, न भूख की चिन्ता न प्यास की। शाम को विदेशी जोड़ा तांगे से उतरा। युवक ने अपनी जिन्स में से पर्स निकाला तो रांझे की धड़कन तेज हो गई। उसे ख्याल आया, देखूं क्या पाता हूं, इन विदेशियों से। एक बेपरवाह सी मुस्कुराहट के साथ दस का पत्ता बढा तो रांझे का चेहरा बुझ सा गया। उसने लेने से इन्कार किया, बोल ही पड़ा, 'अरे साहब दिन भर घुमाया फिराया है आपको। यह तो घोड़ी के घास का पैसा भी नहीं है, फिर हमारे पेट का गड्ढा कैसे भरेगा।'

देखते ही देखते कुछ तमाशबीन इकट्ठा हो गये। भीड़ देखकर चौराहे का सिपाही भी आ गया। सिपाही ने बड़े मुलायम स्वर में उस विदेशी जोड़े से अंग्रेजी में कुछ कहा। उसकी निगाहें विदेशी युवती की ओर लगी थी, जो बड़े ही इत्मीनान से सिग्रेट के कश खींच रही थी।

'हूं तो यह बात है! क्यों बे नामाकूल इतना भी नहीं जानता कि विदेशी हमारे मेहमान हैं, इनकी सेवा करना हमारा धर्म है। पकड़ दस का पत्ता और दफा हो जा यहां से।' सिपाही ने जोश मे आकर एक डंडा जमा दिया, रांझे की कमर पर। रांझे का सिर चकरा गया। विदेशी युवती ने सिपाही से कहा; 'थैंक्यू' और सिपाही बड़बड़ाने लगा, स्साले ये लोग तो देश की इज्जत खराब करते हैं। विदेशी महमानों को लूटते हैं।

भीड़ में जोरदार ठहाका लगा। रांझे को वह दिन याद हो आया, जब वह केवल सोलह वर्ष का था और मजदूरी करके अपनी बीमार मां और अन्धे बापू का पालन करता था। उस वक्त अंग्रेजी राज था। एक दिन ठेकेदार ने आधी मजदूरी देकर ही अंगूठा लगवाना चाहा था और विरोध करने पर अंग्रेजी जूतों और घूसों की मार पड़ी थी। और आज, आज स्वराज्य के बाद भी इन विदेशियों के कारण ही डन्डों का प्रसाद मिला था।

□□

सुरेन्द्र मन्थन

□

आदमज़ाद

बस में पैर तक सटाना मुश्किल हो रहा था। जो सीटों पर थे, वे भीड़-रस लेने की स्थिति में थे। वातावरण में शोर भरा था। नजदीक खड़ी महिला की गोदी का बच्चा लगातार चीखे जा रहा था। महिला के चेहरे पर विवशता थी। अचानक कर्तव्य-भावना ने जोर पकड़ा। साथ बैठे यात्री को थोड़ासा सरकने का अनुरोध कर महिला के लिए जगह बना दी। सुख का सांस मिलते ही बच्चा खामोश हो गया, लेकिन फूटन साथी के चेहरे पर झलक उठी। बोला, 'आपकी परिचित है क्या ?'

'नहीं तो।'

'यह गलत बात है। कभी किसी औरत ने भी आपको जगह दी है? सीट खाली पड़ी हो तो भी नाक चढ़ाएगी। मुझे औरत जात से नफरत है।'

मैं एकदम कोई उत्तर नहीं दे पाया; लेकिन महिला तड़प उठी। बच्चे की कमीज उठाकर बोली, 'देख ले बाबू, इस आदमजाद के कारण ही आज यह बात सुननी पड़ रही है।'

□□

हरीश गोयल

□

धार्मिकता

बस एक झटके के साथ रुक गयी। अगला दरवाजा खुला और एक सज्जन हाथ में एक टोकरा उठाये चढ़ आये और फुर्ती से लगे बताशे बांटने। लोग वजह पूछ पाते कि एक और सज्जन हाथों में दान रसीद पुस्तिकाएं उठाये चढ़ आये और बताशों के पीछे छिपा उद्देश्य बस की दाहिनी खिड़कियों के पार उंगली उठाकर बताने लगे 'वो देखिये जनाब, वहां जामा मस्जिद की नींव रखी गयी है और यह प्रसाद उसी के उपलक्ष्य में है, ले लीजिए और जो कोई बन्दा खुदा की इबादत मे 'कुछ' देना चाहे तो रसीद कटा ले।'

उस धर्म के मानने वाले यात्रियों से जो कुछ भी बन पड़ा, देकर बताशों को सादर ग्रहण कर लिया। लेकिन चूंकि मामला धर्मनिरपेक्षता का था सो उस धर्म के न मानने वालों को भी बताशे मजबूरन लेने पड़े। पर ज्योंही बस चली मेरे पास वाले सज्जन ने अपने साथ वाली सीट पर बैठे दो छोटे बच्चों को अपने बताशे पकड़ा कर हाथ कुछ यूं झाड़े मानों कर्ज का बोझ उतर गया हो। और उन्हें देखकर तो जैसे उस धर्म के न मानने वाले लोग यकायक धर्मसंकट से उबर गये। लगभग सभी ने अपने-अपने बताशे उन बच्चों को सौंप कर चैन की सांस ली।

मैं अपने हाथ के बताशों के बारे में सोच ही रहा था कि बस फिर झटका खाकर रुकी और ठीक उसी तरह दो सज्जन फिर बस में चढ़ आये, और

लगे बताशे बांटने। अलबत्ता अबकी बार बताशे और रसोदें जामा-मस्जिद के वास्ते नहीं, वहां से कुछ ही दूर मंदिर निर्माण के उपलक्ष्य में थे जिसकी नींव भी उसी दिन रखी गयी थी। अब यात्रियों की मनःस्थिति उलट गयी।

अनास्था की अकुलाहट जो पहले वाले यात्रियों के मुख पर थी वह अब दूसरे धर्म के मानने वालों के चेहरों पर पुत गयी थी, क्योंकि बताशे उन्हें भी लेने पड़े थे।

लेकिन ज्योंही बस चली उन्होंने भी ठीक उसी तरह अपने-अपने बताशे उन्हीं बच्चों को पकड़ा दिये। और मैं किंकर्तव्यविमूढ़-सा एक दूसरे धर्म के प्रति इनसानी वितृष्णा के बारे में सोच रहा था और देख रहा था उन बच्चों को जो धर्म के इन चोंचलों से बेखबर निरीहमन बड़े चाव से बताशों को लगातार खा रहे थे, किसी स्वादिष्ट व्यंजन की तरह।

तभी, अचानक मेरा ध्यान फिर अपने हाथों के बताशों की ओर गया जो अब मुट्ठी के अंदर ही पसीज कर घुलमिल गये थे। शायद उनमें धर्म की लड़ाई नहीं थी।

□□

डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ

□

हिन्दी लघु कथा : व्यवस्थाविरोध का संदर्भ

समकालीन कहानी पर लिखते हुए डॉ. विश्वंभरनाथ उपाध्याय का विचार है 'आज का साधारण जन 'व्यवस्था' के एक विराट यंत्र का पुर्जा हो गया है। उसके संघर्ष के दो आयाम हैं। प्रथम जीवन-निर्वाह के लिये परायी चाकरी और उस दासता से, भविष्य में सामूहिक मुक्ति के लिये राजनीतिक या संगठनात्मक संघर्ष।' इधर की लघु कथाओं से गुजरते हुए लगता है कि ये दोनों आयाम उनमें हैं और ये लघु कथा की जुझारू वैचारिकता को प्रमाणित करते हैं। हालांकि मौजूदा व्यवस्था जनसाधारण की है और जनसाधारण के लिये है, इसके बावजूद जनसाधारण का जीवन अनेक प्रकार की जटिलताओं और

विवशताओं से घिरा हुआ है। ऐसी स्थिति 'अमानवीयकरण' को जन्म देती है।' शेखर पागे कृत 'सुरक्षारोग' का बूढ़ा इसी प्रकार का अमानवीयकृत जन्तु है। बेटे की पत्नी के स्वैराचार जो मजबूरी में होता है-से वह आहत होने के बजाय खुश होता है। उसे लगता है, अब जीवन यापन का प्रश्न हल हो गया। 'बूढ़े की आँखें तब चमक रही थीं, खाँसी रुक गयी थी, वह खुश था कि पुरुषत्वहीन बेटे का बुढ़ापा अब सुरक्षित रहेगा।' कमल चोपड़ा कृत 'मनोरंजन' में उच्च वर्ग की अमानवीयता केन्द्र में है, जिसके चलते आम आदमी का जीना दूभर हो चला है। चौधरी साहब अपने बच्चे और अपने मनोरंजन के लिये सत्तो की हत्या कर बैठते हैं और किसी को वास्तविकता का पता नहीं चलता। 'थोड़ी देर बाद ही हवा फैल गयी थी कि चौधरी साहब के फार्म से आम चुराते हुए सत्तू आम के पेड़ से गिर कर मर गया'। कमल चोपड़ा की एक अन्य लघुकथा 'खोप' में यौन-शोषण का संदर्भ है और संकेत है कि निर्धन का सम्मान पैसे वाले की दृष्टि में बेमानी है। शीला न चाहते हुए भी बलात्कार का शिकार होती है। कमल गुप्त की लघुकथा 'कुत्ता' बहुत तीखेपन के साथ इस सत्य को सम्प्रेषित कर सकी है कि 'आदमी' के बजाय 'कुत्ता' होना कहीं आरामदेह है। कम से कम भूख की विकट समस्या से दो-चार तो नहीं होना पड़ेगा। इसका अंतिम वाक्य व्यवस्था के रहनुमाओं के लिये जोरदार तमाचा है।

कुछ लघुकथाओं में वर्तमान तन्त्र के पहरुओं-नेता, पुलिस, अफसर आदि की क्रूरता, भ्रष्टाचार, अनीति आदि को विस्तार से व्यक्त किया गया है। इस प्रकार की कथाएं वर्तमान प्रजातांत्रिक व्यवस्था के लिये बहुत बड़ा सवालिया निशान बन सकी हैं। रामनारायण उपाध्याय कृत 'गरीबी' में बहुत क्षोभ के साथ कहा गया है कि हमारी नियति ऐसे हाथों में होती है, जो स्पष्ट बात न कर हमेशा गोलमाल बात करते हैं। श्री उपाध्याय की एक अन्य लघुकथा 'पुराना सौदागर नये बंदर' दल-बदल की विकृति को रेखांकित करती है। रोशनलाल सुरीवाला ने 'जनतंत्रावतार' में मौजूदा व्यवस्था को गधे पर ढोयी जाती हुई कह कर करारा व्यंग्य किया है। आज के माहौल में ईमानदारी, परिश्रम, सहयोग आदि मूल्य कहीं बिला गये हैं, सर्वत्र अनीति और कदाचार का बोलबाला है। महावीर प्रसाद जैन की 'झूठ' शीर्षक रचना में सिपाही की नीयत से स्पष्ट हो जाता है कि अब रक्षक ही भक्षक हो गये हैं। इसी प्रकार 'फिटनेस' (सुभाष नीरव) भी रिश्वत के बोलबाले का बयान करती है। ऐसी व्यवस्था में समझदार और ईमानदार की मौत है। जानवर (कमल चोपड़ा) का सिर्फ 'रोटी' पर काम करने वाला किशोर इसी प्रकार का अभागा है। वह अपनी माँ के लिये एक समय खाकर जिन्दा रहना चाहता है, शोषक वर्ग को

उसकी भावना के प्रति कोई सहानुभूति नहीं है। यदि आम आदमी जाति से भी निम्नवर्गीय है तो उसकी मुश्किलों का पारावार नहीं है। एक अछूत बच्चे को पढ़ने का खामियाजा भी भुगतना पड़ सकता है, इसकी अभिव्यक्ति 'अनुकरण' (गोविन्द सेन) में हुई है। वह गांधीजी का पाठ–'एक गाल पर चांटा लगने पर दूसरा सामने कर देना' दुहराने पर बुरी तरह पीटा जाता है। ऐसी परिस्थितियों में जी रहा जनसाधारण यदि संगठित नहीं हो पाता या अपने मत-विरोधों को खत्म नहीं कर पाता तो यह अस्वाभाविक नहीं है। ब्रजेश परसाई कृत 'कुआं, वे और वह' में इसी विडम्बना को रेखांकित किया गया है, 'वे अभी भी कुएं में पड़े थे और उनमें से जो दो-चार व्यक्ति बाहर निकलने का प्रयत्न कर भी रहे थे, वे उनकी टांगें खींच कर प्रसन्न हो रहे थे।'

इस प्रकार की लघुकथाएं पढ़कर कुछ समीक्षक कह सकते हैं कि ये निराशावादी मानसिकता की रचनाएं हैं। इनमे जनसाधारण को बेहद निराश, निहत्था, बेकार साबित किया गया है। दरअसल, सभी लघुकथाएं निराशा की सृष्टि नहीं करती। ये मौजूदा यथार्थ को उभारती हैं। ये संकेत करती हैं कि अभी जनसाधारण एक जुट और संगठन बद्ध नहीं हो पा रहा है। यह भी कहा जा सकता है कि शोषक शक्तियां इन्हें संगठित नहीं होने दे रही हैं। लेकिन कुछ कथाओं में संगठित होने की कोशिश मिलती है। कमलचोपड़ा कृत 'चूहे की सल्तनत' में लठैत प्रधानजी की बात मानने से इनकार कर देते हैं। 'अस्तित्वहीन नहीं' (मधुकांत) में भी दमन-उत्पीड़न को न सहने का बोध मुखरित हो रहा है। 'संकेत' (अनिल जनविजय) के संदर्भ में डॉ. शंकर पुणतांबेकर की यह टिप्पणी सटीक है—'इस वर्ग के साथ इसी तरह अन्याय होता रहा, उसे रोजी पाने का अवसर न मिला तो हो सकता है, एक दिन वह रोटी के लिये हाथ नहीं पसारेगा, सीधे उस पर झपटा ही मारेगा।' इस तरह स्पष्ट है कि लघुकथाओं में यथास्थिति के विरुद्ध संघर्ष का आह्वान है। लेकिन अधिकतर लघुकथाएं व्यंग्य की चुभन के साथ समाप्त होती हैं, पाठकीय चेतना को तेजाब की जलन की अनुभूति नहीं हो पाती। वैसे प्रबुद्ध लघुकथाकार इस मत के हैं कि मुक्ति अगर है तो सबके साथ है। वे यह भी जानते हैं कि अकेली लड़ाई के कुछ मायने नहीं होते। चूंकि जनसाधारण जाति, धर्म, सम्प्रदाय आदि कटघरों में बंटे रहने के कारण सामूहिक लड़ाई नहीं लड़ पा रहा है, अतः वर्ग संघर्ष की प्रत्यक्ष स्थितियां अभी देखने में कम आ रही हैं। यद्यपि कुछ लघुकथाओं में वामपंथी राजनीति की ओर रुझान स्पष्ट है, फिर भी स्पष्ट राजनीतिक प्रतिबद्धता इनमें नहीं दिखायी देती। एक स्पष्ट मानवीय सहानुभूति का भाव अधिकतर लघुकथाओं में है, व्यवस्था-विरोध इसका एक प्रमुख आयाम

है। वर्तमान व्यवस्था का विरोध करने और परिवर्तन की मांग मुखर होने के बावजूद लघुकथाओं में वैकल्पिक व्यवस्था की अवधारणा और स्वरूप बहुत स्पष्ट नहीं है। इतना अवश्य है कि लघुकथाकार जिस नयी व्यवस्था की मांग करते हैं, उसमें जन साधारण की सामाजिक आर्थिक मुक्ति असंदिग्ध है।

□□

कमल चोपड़ा

□

लघुकथा : समकालीन संदर्भ

किसी भी गतिशील विधा को निश्चित शब्दों में परिभाषित करना सहज और संभव नहीं है, लेकिन असंभव होते हुए भी साहित्यिक विधाओं के परिचय व पहचान की तलाश उतनी ही आवश्यक हो जाती है इसलिए प्रयास किया जा सकता है।

कुछ ही पंक्तियों में घटना में निहित अन्तर्विरोध को लक्षित करने के साथ–साथ युग के मुख्य अन्तर्विरोधों को बेपर्दा करना लघुकथा की अपनी पहचान है।

लघुकथा क्योंकि काल सत्य या समय सत्य के किसी विशेष प्रश्न बिन्दु को लेकर चलती है और उसी के अनुसार समस्त नियोजना रहती है, इसलिए उसकी आकारगत लघुता उसके स्वरूप की परिचायक बन जाती है।

समकालीन लघुकथा मानवीय स्थितियों के विश्लेषण-विशेष की कथाएं हैं। इस विश्लेषण-विशेष में आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक और नैतिक छल, छद्म और पाखंड का मुखौटा उघड़ता हुआ नजर आता है।

संरचना के संदर्भ में लघुकथा अपने अन्दर ही अनेक अर्थवान सूत्रों का सृजन करती है। शाब्दिक मितव्ययता, भाषिक कलात्मकता, विचारगत तीक्ष्णता, कथ्यगत गहनता, संवेदनात्मक उष्णता और शिल्पगत गांभीर्य के कारण लघुकथा गद्य साहित्य का एक सफल, सटीक एवं सशक्त कथा प्रकार है।

अनावश्यक वर्णन और विवरण से बचते हुए जीवन के यथार्थ अंश को चित्रित करने की सामर्थ्य समकालीन लघुकथा में है, जिसकी सारी चेष्टा निश्चित स्थल पर उसको टिकाकर मुख्य विसंगति, विद्रूपता और विषमता को प्रकाशित कर सीधे मर्म पर चोट करने की होती है।

दैनिक जीवन की छोटी-छोटी और निहायत साधारण स्थितियों, घटनाओं, और पात्रों के जरिये जीवन को विवेचित, विश्लेषित और व्यंजित करने की सार्थक एवं महत्वपूर्ण कोशिश समकालीन लघुकथा में की गई है।

समय के साथ जरूरी हो गए परिवर्तन की बाधाओं के मूल स्त्रोत को ढूंढने और बाधाओं को हटाने में, यानि क्रांति की सहायक शक्ति के रूप में लघुकथा का प्रयोग साहित्य की अन्य विधाओं के मुकाबले कहीं अधिक कारगर ढंग से किया जा रहा है कारण लघुकथा में अतिरिक्त सामर्थ्य और समकालीन सार्थकता है।

साहित्यिक सृजनात्मक अपेक्षाओं को पूरा करते हुए मनुष्य को उसकी यातनाओं के मूल स्त्रोत के प्रति जागरुक करने की अपनी भूमिका का निर्वाह लघुकथा सफल और समर्थ ढंग से कर पा रही है।

हिन्दी साहित्य के दौर से ही लघुकथा अपने अस्तित्व का अहसास करती रही है। आठवें दशक में लघुकथा अपने स्वस्थ फार्म में आकर पुनर्स्थापित हो जिस तेजी से साहित्य की मुख्य धारा की तरफ बढ़ रही है वह किसी भी समीक्षक के लिए आश्चर्य का विषय हो सकता है।

लघुकथा हिन्दी साहित्य में एक कथा प्रकार के रूप में अन्य किसी भी स्थापित कथा विधा की तरह अपनी भूमिका बखूबी निभा पा रही है।

उन सूक्ष्म, तीव्र, गूढ़, प्रखर, स्पष्ट, गहन, मुख्य तथा तीक्ष्ण कथा रूपों को लघुकथा अपना फार्म देकर हिन्दी साहित्य को न केवल समृद्धि दे रही है बल्कि पूर्णता प्रदान कर रही है, जिसके छूटे रह जाने से हिन्दी साहित्य, विशेषकर कथा साहित्य की अपनी भूमिका के औचित्य पर प्रश्न लग जाने का स्वाभाविक खतरा हो सकता था।

हिन्दी साहित्य में तो लघुकथा ने अनावश्यक फैलाव, वर्णनात्मक सपाटताओं, अस्वाभाविक बड़बोलापन, बिखराव और स्थूल विवरणात्मकता आदि का बहिष्कार कर ठोस और सर्वदा कारगर रचना को विधा में प्रस्तुत की है जिससे हिन्दी साहित्य पुष्ट और सार्थक, सटीक और समृद्ध हुआ है।

लघुकथा के प्रति रचनाकारों का उत्साह अकारण ही नही है। यह विधा के सामर्थ्य और समकालीन सार्थकता का परिचायक है। अकारण ही नही है कि व्यवस्था के नापाक गलीज और खूनी इरादों को परत दर परत नंगा करने के लिये लघुकथा अनेक सृजनात्मक स्वरो का हथियार बनी है। लघुकथाकार बड़ी शिद्दत के साथ सामान्य जन की पैरवी कर पा रहा है।

एक ही विषय, बिन्दु, प्रश्न अंश, तत्व या खण्ड को कथ्य की गरिमा प्रदान करने के साथ-साथ पात्रो व घटना को मानवीय सत्यो से जोड़ना लघुकथा की अपनी विशेषता है। खण्डित जीवन के कोणो या अंशों का सूक्ष्म संवेदनाजनक चित्रण लघुकथा की एक और विशेषता है।

इन विशेषताओ व संभावनाओं को जाचते परखते हुए हम पाते हैं कि समकालीन लघुकथा एक सर्वाधिक संभावनापूर्ण, सफल एव सर्वाधिक सार्थक कथा प्रकार है। और आज का लघुकथाकार इस जिम्मेदारी भरी संभावना से न केवल वाकिफ है बल्कि इस दिशा मे जागरुक और सतत प्रयत्नशील भी है।

आज और अब की समूची कुरूपता, कुत्सितता, वीभत्सता और भयावहता को अभिव्यक्ति देने के बावजूद लघुकथा मात्र इन्हीं की कथा बन कर नही रह जाती बल्कि सूक्ष्म स्तरो पर इनकी अन्तर्यात्रा करके इनका अतिक्रमण करती है और इनके पास जाकर मानवी संभावनाओ की ओर सटीक और सशक्त सकेत करती है।

अत: समकालीन लघुकथा अपने प्रस्तुतिकरण और संवेदनात्मक अन्वेषी पकड़ के कारण अन्य समकालीन विधाओं से अलग अपना व्यक्तित्व बनाने की सामर्थ्य रखती है।

लघुकथा तमाम गतिरोधो के बावजूद अन्य साहित्यिक विधाओं की तरह ही समय के साथ-साथ निरन्तर गतिशील है। कई समकालीन रचनाकार लघुकथा को और अधिक प्राणवान प्रभावी सहज और सार्थक बना कर केन्द्र की ओर ले जाने मे प्रयत्नरत हैं।

फलस्वरूप समकालीन लघुकथा अपने परिवेश को तटस्थ और वस्तुपरक ढंग से चित्रित कर जीवन को नए अर्थ दे पा रही है।

□□

बलराम अग्रवाल

□

लघुकथाकार : यथार्थ लेखन और सृजनात्मकता

यथार्थ-लेखन और लेखकीय दायित्व :

यथार्थ-लेखन कोई बुरी बात नहीं है। अनुभूत लेखन भी कोई बुरी बात नहीं है। बुरी बात है-लेखन का अधोगामी होना।

'साहित्य समाज का दर्पण जरूर है परन्तु उसे इस तरह न रखें कि उससे समाज के बजाय सूर्य ही प्रतिबिम्बित होकर हमारी आंखों को चौंधियाता रहे और हमें अंशतः अन्धाकर डाले। हमारे कुछ लेखकीय दायित्व भी होते हैं और उनमें मुख्य है सृजनात्मकता। यह न हो तो लेखन की आवश्यकता ही क्या है। जिस यथार्थ को अपनी लघुकथा मे हम चित्रित करते हैं–पाठक या अन्य आम आदमी उससे अनभिज्ञ है, ऐसा सोचना ही मूर्खता होगी। कुछ स्थितियां अवश्य ऐसी होती हैं जो सार्वजनिक होते हुए भी लेखक द्वारा उद्घाटनोपरान्त ही दूसरों पर प्रकट होती है अथवा दूसरों को नये सिरे से कचोटती है। ऐसी स्थितियों को तो उद्घाटित कर देना भर ही लेखक के लिए काफी होता है। उदाहरणार्थ–जगदीश कश्यप की 'उपहार' (प्रकाशित सारिका, 198 पृष्ठ) तथा विक्रम सोनी की 'जूता' (प्रकाशित कथादेश 198 पृष्ठ) परन्तु अधिकांशतः ऐसा नहीं है। सृजनात्मकता से हमारा तात्पर्य 'ट्रीटमेंट' देने से न होकर; लघुकथाकार द्वारा लघुकथा को ऐसे बिन्दु पर छोड़ने से है जहां चिन्तन के सकारात्मक आयाम प्रारम्भ होते हैं।

लेखकीय दायित्व और लघुकथाकार :

सर्वप्रथम तो यह जान लेना आवश्यक है कि लघुकथा का मूल क्या है? इसके उद्भव की वजह क्या थी? अपने उद्देश्य में यह कहां तक सफल रही और सम्प्रति, अब इसकी क्या स्थिति है?

लघुकथा, जिसे हम कथा साहित्य की स्वतन्त्र-विधा (अथवा उपविधा) बतलाते हैं वस्तुतः कथा साहित्य की मूल विधा है। सर्वप्रथम जो भी कथा कही

गयी होगी'''निःसन्देह वह लघुकथा ही रही होगी। क्योंकि प्राचीन काल में साहित्य मौखिक रूप में ही प्रचलित था अतः लम्बी कहानिया गढने, सुनने और सुनाने की तुक समझ मे नहीं आती। वस्तुतः पण्डों-पुजारियों, साहूकारों और सामर्थ्यवानों के दमन से त्रस्त प्रतिक्रियावादी नागरिकों ने उन्हें छकाने को ऐसे किस्से गढ़े; जो छोटे और नुकीले थे। अपने आकाओं मे इनके श्रवण से उत्पन्न-तिलमिलाहट को भांप कर लोगों ने इन्हें हवा दी और ये किस्से ही कालान्तर मे समग्र-क्रान्ति के वाहक बने और परवर्ती लेखकों के द्वारा इन्हें साहित्यिक रूप मिला। ये किस्से कभी मात्र धर्मबोधक रहे तो कभी मात्र नीति बोधक। जैसे भी रहे ये अपना काम सुघड़तापूर्वक निपटाते रहे। बावजूद इसके एक समय ऐसा भी आया जिसे आप लघुकथा का 'सुप्तकाल' कह सकते है। लघु का 'सुप्तकाल' से मेरा तात्पर्य 'सुप्तकाल' की लघुकथाओं से नहीं है। जब उसका स्थान पूर्णतः कहानी एवं उपन्यास ने ले लिया। ऐसा होना जैसा भी रहा हो परन्तु एक रिक्तता अवश्य रही जिसे हमारे साहित्य-सृजक निरन्तर महसूस करते रहे। उन्हें लगता रहा कि कुछ था जो कथा साहित्य मे अब नही रहा। वह क्या था ? क्या था जिसमें इस अदृश्य रिक्तता को भरा जा सकता है ? लोग प्रयत्नशील रहे, अन्वेषण चलता रहा और तब जन्मा एकांकी। एकांकी कुछ और नहीं-हमारे हाथ से फिसल गयी लघुकथा की तलाश का अनोखा पड़ाव है। भारत अन्वेषण के लिए निकले कोलम्बस द्वारा अमरीका की खोज जैसा है यह। एकांकी नाट्य-साहित्य को सृजनकारों की अपूर्व-अभूतपूर्व देन है जो लघुकथा के अपरोक्ष अन्वेषण स्वरूप हमे मिली। लोकप्रियता के जो आयाम एकांकी ने स्थापित किये हैं वे ईर्ष्यनीय हो सकते हैं-लघुकथा के लिए यह गर्व का विषय है।

साहित्य मे जो चीज जहां है उसका उससे अधिक उपयुक्त स्थान कोई और हो नहीं सकता। यही वजह थी कि एकांकी का अन्वेषण उस रिक्तता को भर न सका। पुनः लगा रिक्तता शेष है। लघुकथा तब भी थी परन्तु वह सृजकों के अवचेतन मन के किसी अन्धेरे कोने में पड़ी थी। इसका सबसे बड़ा प्रमाण पूर्ववर्ती लेखकों द्वारा गाहे-बगाहे अनजाने ही लिखी गयी लघुकथाएं हैं। वस्तुतः उनके अवचेतन को बार-बार ठकठकाती रही लघुकथा कि मैं हूं, मैं हूं वह जो खो गयी थी-मुझे पहचानो। दुर्भाग्य कि वे उसे पहचान लिया गया बल्कि अपना भी लिया गया है।

हम ऊपर कह आए हैं कि लघुकथा का प्रादुर्भाव एक मारक शक्ति के रूप मे हुआ। अतः मारक तत्व लघुकथा का मूल तत्व है। लघुकथा यदि

पाठक में तिलमिलाहट उत्पन्न नहीं करती, पठनोपरान्त उसमें चिन्तन, जिज्ञासा उत्पन्न नहीं करती तो वह उसकी कमजोरी है। लघुकथा के पुनर्प्रादुर्भावोपरान्त भी कथा साहित्य में यदि रिक्तता का आभास होता है तो यह इल्जाम सौ फीसदी लघुकथाकारों के सिर जाना चाहिये। लघुकथा के पास वह सब कुछ है जो वर्षों पुरानी साहित्य की रिक्तता को भर सके। आप परिश्रम करें लघुकथा वह सब कुछ आपको सौंप देगी–सब कुछ यानि तेवर, तीव्रता गति और लयादि सब।

लघुकथाकार, यथार्थ-लेखन और सृजनात्मकता :

लघुकथा में यथार्थ लेखन और सृजनात्मक लेखन के मध्य अन्तर स्पष्ट करने हेतु हम कुछ लघुकथाएं उद्धृत कर रहे हैं। उद्धृत लघुकथाओं के लेखक यह समझकर कि उनकी लघुकथा को अ-सृजनात्मक माना गया है, निराश न हों। लघुकथाएं अच्छी हैं, सिर्फ दिशा चाहती हैं।

प्रो. कृष्ण कमलेश की लघुकथा 'किराये की जिन्दगी' (लघु आघात जुलाई-सित. 85), रतीलाल शाहीन की लघुकथा 'प्रभाव' (वही), शराफत अली खान की लघुकथा 'पूंजी' (वही पृ 50) एवं कासिम खुरशीद की लघुकथा 'गुण्डा' (युवा रश्मि जून 85) में यथार्थ चित्रण हुआ है। अन्य बहुत सी लघुकथाओं का जिक्र छोड़ फिलहाल हम उपरोक्त चार के द्वारा ही विषय को आगे बढ़ाते हैं।

(अ) किराये की जिन्दगी : आर्थिक विपन्नता से त्रस्त नायक द्वारा ऐसी स्थिति में जबकि वह हर वस्तु को किराये देकर प्राप्त कर रहा हो, किराये की बीबी रखने की परिकल्पना को विध्वंसक तथा भारतीय समाज को दिशाहीनता प्रदान करने वाला ही कहा जाएगा, भले ही यह यथार्थतः सत्य क्यों न हो।

(ब) प्रभाव : 'प्रभाव' की मुख्य स्त्री पात्र पाकिस्तान हो आने के कारण हिन्दू-मुस्लिम का भेद जान गयी है। पाकिस्तान से लौटने के उपरान्त वह हिन्दू परिवारों में दूध की बोतलें वितरित करने से साफ इन्कार कर देती है। यथार्थ लेखन के नाम पर ऐसे प्रयास हितकारी नहीं हैं।

(स) पूंजी : ऐसे में जबकि हमारी सामाजिक आर्थिक स्थिति अधिक बच्चों के भरण-पोषण की अनुमति नहीं देती, अधिक बच्चों की उत्पत्ति की हिमायत करना श्रेयस्कर नहीं है। कोई भी बच्चा जन्म लेते ही नहीं कमाने

लगता। दूसरे, साहित्य का काम समाज में जुझारू रुख उत्पन्न करना है न कि समझौतावादी और निराश पीढ़ी तैयार करना।

(८) गुण्डा : असामाजिक तत्वों द्वारा किसी गुण्डे को दंगा-फसाद हेतु नियोजन देना किसी भी प्रकार पुलिस-कर्मचारी के नियोजन के समकक्ष नहीं हो सकता। बजाय इसके कि गुण्डे को लज्जित किया जाता, पुलिसमैन को अवश्य दिखाया गया है। यथार्थ चित्रण अपनी जगह ठीक हुआ है परन्तु इसके द्वारा गुण्डा तत्वों की उत्साहवृद्धि के प्रयास काबिले तारीफ नहीं हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि हम सप्रयास सृजनात्मक लघुकथाएं लिखें। भारतीय समाज की विकृतियों को यथार्थलेखन के नाम पर इस प्रकार न उछालें कि वह नकारात्मक रवैया उत्पन्न करे बल्कि इस प्रकार सामने लावें कि उन विकृतियों के प्रति लोगों में रोष उत्पन्न हो, उन्हें सुधारने की आवश्यकता महसूस हो। तभी लघुकथा लेखन सार्थक सृजनात्मक होगा।

□□

यश खन्ना 'नीर'

□

चक्रव्यूह में फंसी लघुकथा

पहनने की जबरदस्ती में कांच की चूड़ियां टूट भी सकती हैं। आज लघुकथा को भी कुछ इसी प्रकार के खतरे से दो-चार होना पड़ रहा है, क्योंकि पाठक उसे सिर्फ इसलिए पढ़ने लगा है कि समय बचता है और रचनाधर्मी यह सोचकर लिखने लगा है कि कहानी की लम्बाई पर कौन अपनी शक्ति और परिश्रम बरबाद करे। (फिलर के तौर पर सुविधापूर्वक प्रकाशन भी एक नुक्ता है।)

यह सही है कि अतिसूक्ष्म विचार को कहानी की भांति विस्तार देना अनावश्यक और नीरस है।

एक प्रसिद्ध लघुकथाकार का कथन है कि जिन वनस्पतियों के बीज मात्र भार की दृष्टि से हल्के होते हैं उन्हें रोपणों में रोपा जाता है ताकि वायु के वेग

से उड़ न जाएं। यानी लघुकथा वस्तुतः कहानी या उपन्यास की भूमिका या रूपरेखा मात्र है। तो फिर इसका अपना अस्तित्व क्या हुआ ?

पंचतन्त्र और हितोपदेश की कथाओं से लघुकथा को जोड़ना भी कहां तक उचित है ? पंचतन्त्र की कथायें अपने-आप में पूर्ण होती हैं। वे एक किनारे से शुरु होती हैं और किसी भी काल मे अप्रासंगिक नहीं ठहराई जा सकती, किन्तु यही बात लघुकथा के बारे में नहीं कही जा सकती। अव्वल तो लघुकथा एक किनारे से नहीं बल्कि बीच मे ही कहीं से शुरु हो जाती है और एक बात कहकर खत्म हो जाती है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे किसी कहानी के लिए बिम्ब या प्रसंग को 'लघुकथा' शीर्षक के नीचे रख दिया गया है। और उस पर तुर्रा यह कि इसका प्रभाव भी सामयिक और क्षणिक होता है।

'देखन में छोटे लगें घाव करें गंभीर', यह बात आज की लघुकथा पर लागू नहीं की जा सकती। इसका मूल कारण यह है कि लघुकथा में वह शक्ति नहीं पैदा हो सकी जो पाठक को उसके साथ जोड़ सके। कहानी मे पाठक कहानी के साथ जुड़ जाता है, उसके साथ हंस सकता है, रो सकता है।

डेढ़ दशक मे जवान हुई यह 'विधा' आधे दशक में ही बोरियत का सामान न बन जाये, इसके लिए विचार करना होगा। कोई भी वस्तु जब बाजार में अधाधुंध आ पड़े तो उसका पहला मूल्य बनाये रखना मुश्किल हो जाता है। और फिर लघुकथा की एकरसता""उफ्! विषय ही कितने हैं ? यदि कोई इन विषयों से हटकर लिखता है तो किसी संत-महात्मा की भांति कुंभ के मेले में खो जाता है।

जब लघुकथा का चलन नया था तो इससे काफी आशयें जगीं थी, किन्तु अब यह गेहूं के खेतो में खरपतवार की तरह उगने लगी है और इस प्रकार कहानी को हानि पहुंचाने लगी है। किन्तु अभी कहानी का अहित बहुत अधिक नहीं हुआ। लघुकथा के उन्माद को दबोचना होगा और रचनाधर्मियों को विषय-चयन में सतर्कता के साथ-साथ यह भी देखना होगा कि 'सबद बचता है' वाली विचारधारा और न पनपने पाये, अन्यथा हरी सब्जियों के स्थान पर ताकत की गोलियों पर ही निर्भर रहना बुरे अंत का द्योतक होगा।

यदि लघुकथा यथार्थपूर्ण नहीं हो सकती, उसका कथ्य सुस्पष्ट नहीं और वह शब्दों के चक्रव्यूह में जानबूझकर फंसायी जाती रहे तो लघुकथा का वध नहीं होगा वरन् उसे आत्महत्या करनी पड़ेगी।

□□

पारस दासोत

□

लघुकथा : रोटी पर लगे घी के लिये नहीं,... रोटी के लिये

— लघुकथा, जिसे कथाकार तो कम शब्दों में पाठक के सामने रखता है, परन्तु पाठक उसे मनन, चिन्तन करके लम्बी कर लेता है।

— लघुकथा का जन्म सीधी रेखाओं से नहीं, संघर्ष/तनाव से उत्पन्न आड़ी तिरछी रेखाओं से होता है।

— लघुकथा कपड़ों की नहीं...पेट की बात करती है।

— लघुकथा एक व्यक्ति की नहीं...पूरे वर्ग की कथा होती है।

— लघुकथा केवल लघुकथा होती है...इसके अतिरिक्त कुछ नहीं। न कहानी का छोटा रूप न चुटकुले से कुछ ऊपर। ठीक जैसे– पृथ्वी न तो नारंगी की तरह गोल है, न अण्डे की तरह गोल, पृथ्वी तो पृथ्वी की तरह गोल है।

— लघुकथा के साथ 'लघु' विशेषण जुड़ जाने से विधा या कथाकार कमजोर या अप्रभावी नहीं हो जाता है, जैसे–किसी व्यक्ति के 'छोटा भाई' होने से उसके व्यक्तित्व कृतित्व में कोई अन्तर नहीं आता।

— लघुकथा का संघर्ष रोटी पर लगे घी के लिये नहीं ...रोटी के लिये है।

— लघुकथा कहानी न होते हुए भी अपने आपमें पूर्ण कहानी होती है।

— लघुकथा की लम्बाई केवल शब्दों तक नहीं...पाठक के दिल तक होती है। और पाठक का दिल कथाकार के बहुत ही पास होता है।

— लघुकथा का शिल्प किसी भी अन्य विधा से उधार लिया हुआ नहीं होता। इसी कारण केवल कम शब्द ही किसी कथा को लघुकथा नहीं बनाते जैसे– 'एक था राजा एक थी रानी दोनों मर गये खत्म कहानी।' क्या हम इसे लघुकथा कह सकेंगे...? नहीं ! तो क्यों नहीं ?

— लघुकथा यथार्थ को नंगा नहीं करती, बल्कि यथार्थ स्वयं नग्न होकर (पर्दे को हटाकर) लघुकथा के माध्यम से कम शब्दों में पाठक के समाने आता है। लघुकथा को पढ़कर पाठक अपने चेहरे पर शर्म से हाथ नहीं रखता बल्कि आत्म ग्लानि से अपने चेहरे को नहीं दिखाना चाहता। क्योंकि इस नग्नता में वह या तो अपने आप को नग्न महसूस करता है या फिर...उसमें अपनी हिस्सेदारी।

— लघुकथा की यात्रा मूर्त से अमूर्त की ओर होती है।

□□

'पहचान' लघुकथाओं का एक विशिष्ट संकलन है. और इसमें संकलित लघुकथाएं अपने कथ्य एवं शिल्प के ताज़ेपन के कारण अपनी एक अलग पहचान बनाती हैं.

'पहचान' में संकलित लघुकथाएं मनुष्य के सुखद भविष्य के प्रति तो आश्वस्त करती ही हैं. साथ ही उन षड्यन्त्रों को भी बेनकाब करती हैं जो लगातार आदमी के खिलाफ किये जा रहे हैं.

'पहचान' का प्रकाशन सिर्फ मनोरंजन या धोखा देने के लिए नहीं किया गया बल्कि इसका उद्देश्य वर्तमान यथार्थ से साक्षात्कार है.

मुझे पूरा विश्वास है कि प्रस्तुत संकलन की लघुकथाएं काफी पसन्द होंगी. और 'पहचान' प्रतिनिधि लघुकथा संकलन के रूप में रेखांकित किया जाता रहेगा.

क़मर मेवाड़ी